स्टीफ़ेन ज़्विग

# विराट

प्रसिद्ध उपन्यास का
हिन्दी रूपांतर

सत्साहित्य प्रकाशन

भारतीय पृष्ठ-भूमि पर रचित
विश्व-विख्यात लेखक का
मर्म-स्पर्शी उपन्यास

•

लेखक
**स्टीफ़न ज़्विग**
अनुवादक
**यशपाल जैन**

•

१९८३

**सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन**

प्रकाशक

यशपाल जैन

मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल

एन-७७, कनॉट सर्कस, नई दिल्ली-१

●

तीसरी बार : १९८३

परिवर्द्धित संस्करण

मूल्य : रु. ८.००

●

मुद्रक

कंवल किशोर एण्ड कम्पनी

नई दिल्ली

**उस पीढ़ी को**

जिस पर देश का भविष्य निर्भर करता है .

# प्रकाशकीय

अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के जिन लेखकों की चुनी हुई पुस्तकें 'मण्डल' से प्रकाशित हुई हैं, उनमें स्टीफ़न ज्विग का नाम प्रमुख है। उनकी 'भाग्य की विडम्बना' और 'जिन्दगी दांव पर' तो बहुत ही लोकप्रिय हुई हैं। 'विराट' का तो कहना ही क्या ! यह पुस्तक प्रकाशित होते ही पूरी खप गई थी। अगला संस्करण भी तत्काल हो गया था, लेकिन फिर पुनर्मुद्रण की सुविधा जल्दी नहीं हो सकी। पाठक बराबर मांग करते रहे और अब भी उसकी मांग यथावत बनी हुई है। विदेशी लेखकों के इस प्रकार के उपन्यास कम ही मिलते हैं।

इस पुस्तक का कथानक गीता के 'निष्कर्म कर्म' पर आधारित है। कथानक का ताना-बाना भी हमारे देश की भूमि को लेकर बुना गया है। उपन्यास को पढ़ते समय ऐसा जान पड़ता है, मानो हम भारतीय जीवन की ही कोई कहानी पढ़ रहे हैं। कहानी की शैली तो रोचक है ही, लेकिन उसका प्रभाव इतना गहन है कि पाठक बहुत देर तक सोचने को विवश हो जाता है।

पुस्तक की दूसरी रचना भी अत्यन्त भावपूर्ण है।

हमें विश्वास है कि पाठकों द्वारा इस पुस्तक को बार-बार छापने का हमें अवसर प्राप्त होगा।

—**मंत्री**

# दो शब्द

सन्'४० की बात है। अक्तूबर के मध्य में टीकमगढ़ (म. प्र.) पहुंचा तो एक दिन श्रद्धेय पं० बनारसीदास चतुर्वेदी ने एक छोटी-सी पुस्तक पढ़ने को दी। किसी विदेशी लेखक का कोई सवा-सौ पृष्ठ का उपन्यास था। पुस्तक और उसके प्रणेता का नाम मेरे लिए कुछ नया-सा था। विशेष उत्साह न होते हुए भी किताब पढ़नी शुरू की। कुछ पन्ने पलटे कि फिर उसे छोड़ना मुश्किल हो गया और सारी पुस्तक एक सांस में पढ़ गया। उसमें एक नारी की सहज-स्वाभाविक भावनाओं का इतने मार्मिक ढंग से चित्रण किया गया था कि कोई भी पाठक उससे विचलित हुए बिना नहीं रह सकता था। यह कृति थी 'लैटर फ्रॉम एन अननोन वूमेन' (अपरिचिता का पत्र)[1] और लेखक थे स्टीफ़न ज्विग।

ज्विग से यही मेरा प्रथम परिचय था। उसके बाद तो उनकी जितनी पुस्तकें मिल सकीं, पढ़ीं और उनकी कला के प्रति मेरे मन में प्रशंसा के भाव उत्तरोत्तर बढ़ते गये। कविता, कहानी, उपन्यास, जीवन-चरित, रेखा-चित्र, नाटक गर्जेकि साहित्य का कोई भी ऐसा अंग नहीं था, जिसे उन्होंने न छुआ हो और जिसमें उन्होंने कमाल न कर दिखाया हो। यहूदी होने के कारण उन्हें अपने जीवन में भारी विपत्तियों का सामना करना पड़ा था। फलतः उन्हें बड़ी गहरी अनुभूतियां प्राप्त हो गई थीं, जिनके बिना कोई भी व्यक्ति सफल कलाकार नहीं हो सकता। ज्विग की इन अनुभूतियों से उनके सूक्ष्म अन्वेषण, दुखियों के प्रति उनकी सहानुभूति तथा उनके अन्य मानवीय गुणों का परिचय मिलता है और यही अनुभूतियां उनकी रचनाओं में जान डाल देती हैं।

---

१. 'सस्ता साहित्य मंडल' द्वारा 'जिन्दगी दांव पर' के नाम से प्रकाशित।

हमारे देश के पाठकों के लिए प्रस्तुत उपन्यास का विशेष महत्व है, कारण कि उसकी पृष्ठभूमि भारतीय है। साठ-पैंसठ वर्ष पूर्व ज्विग भारत पधारे थे। भारतीय विचार-धारा के प्रति उनकी विशेष रुचि थी। उससे वे प्रभावित भी थे। प्रस्तुत उपन्यास का नाम 'विराट और दी आईज़ ऑफ दी अनडाइंग ब्रदर' स्वयं ग्रंथकार का दिया हुआ है। प्रारम्भ में उन्होंने गीता के इन श्लोकों का उलथा दिया है :

**न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।**

(अध्याय ३, श्लोक ५)

—कोई भी मनुष्य कर्म किये बिना क्षण भर भी नहीं रह सकता। प्रकृति के गुण प्रत्येक परतंत्र मनुष्य को सदा कुछ-न-कुछ कर्म करने में लगाये ही रखते हैं।

**किं कर्म किमकर्मेति ..**

**यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।**

(अध्याय ४, श्लोक १६)

—(इस विषय में बड़े-बड़े विद्वानों को भी भ्रम हो जाता है कि) कौन कर्म है, कौन अकर्म। (अतः वैसा कर्म तुझे बतलाता हूं, जिसके) जान लेने से तू पाप-मुक्त हो जायगा।

इसी सिद्धांत पर ज्विग ने अपने इस 'विराट' उपन्यास को आधारित किया है। यदि कोई व्यक्ति अकर्म की स्थिति प्राप्त करना चाहे तो वह संसार में कदापि संभव नहीं। कर्म से बचाव हो नहीं सकता। इसलिए आदमी को चाहिए कि वह बिना फल में आसक्ति रक्खे कर्म करे। विराट अपने जीवन में कर्म से छुटकारा चाहता है। वह सोचता है कि कर्म परिणाम लाता है और उसका प्रभाव दूसरों पर पड़े बिना रह नहीं सकता। पाप-मुक्त होने के लिए आवश्यक है कि आदमी कर्म-मुक्त हो; लेकिन जीवन-भर प्रयत्न करने पर भी विराट कर्म के बन्धन से छूट नहीं पाता। उसके जीवन में कितने ही उतार-चढ़ाव आते हैं, कितने ही कष्ट उसे भोगने पड़ते हैं; पर अन्त में वह इसी नतीजे पर पहुंचता

है कि आदमी बिना फल की अभिलाषा किये अपना काम करता रहे, इसी में उसका कल्याण है। उपन्यास के पात्र, कथानक, विचारधारा, वातावरण सबकुछ भारतीय है। कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि लेखक विदेशी है। भारतीयता के रंग में सराबोर होकर ही कोई कलाकार ऐसे सफल उपन्यास की रचना कर सकता था। 'विराट' ज्विग की अपूर्व कृति है।

विदेशी लेखकों की बहुत-सी पुस्तकों के अनुवाद भारतीय भाषाओं में हुए हैं, आज भी हो रहे हैं। ज्विग की भी कुछ पुस्तकें अनूदित हुई हैं। तीन पुस्तकें तो 'सस्ता साहित्य मण्डल' ने ही निकाली हैं। लेकिन जिस लेखक की पुस्तकों के विश्व की लगभग तीन दर्जन भाषाओं में अनुवाद हो चुके हों, उसकी लोकप्रियता का सहज ही अनुमान किया जा सकता है। हम आशा करते हैं कि उनका सम्पूर्ण साहित्य शीघ्र ही भारतीय भाषाओं में उपलब्ध होगा।

प्रस्तुत पुस्तक का अनुवाद कराने का श्रेय श्रद्धेय बनारसीदास चतुर्वेदी को है। यदि उन्होंने आग्रह न किया होता, तो यह काम शायद ही हो पाता। उन्होंने पुस्तक की सारगर्भित भूमिका भी लिख दी। पर वह इतने निकट हैं कि शब्दों में उनका आभार मानना धृष्टता होगी।

हर्ष है कि पुस्तक का परिवर्द्धित संस्करण पाठकों को सुलभ हो रहा है। इसमें एक और बड़ी ही भावपूर्ण कहानी जोड़ दी गई है। इससे पुस्तक की उपयोगिता और बढ़ गई है।

हमें विश्वास है कि पाठक स्वयं तो इस पुस्तक को पढ़ेंगे ही, दूसरों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करेंगे।

—यशपाल जैन

# भूमिका

स्टीफ़न ज़्विग एक असाधारण प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। उनकी प्रथम रचना सन् १६०१ में प्रकाशित हुई थी और अंतिम रचना (बालज़क का जीवन-चरित) सन् १६४८ में छपी। उनका देहांत फरवरी सन् १६४२ में हुआ। जो व्यक्ति निरंतर ४१ वर्ष तक अत्यन्त श्रद्धा-पूर्वक सरस्वती की आराधना करता रहा, बड़े-से-बड़े प्रलोभन भी जिसे अपने निर्दिष्ट पथ से अलग न कर सके, जिसने काव्य, कहानी, नाटक, आलोचना, जीवनचरित तथा उपन्यास इत्यादि क्षेत्रों में समान रूप से सफलता प्राप्त की, जिसे रोम्यां रोलां और गोर्की जैसे महान कलाकार अपना समकक्ष मानते रहे, ऐसे अमर साहित्य-स्रष्टा की रचनाओं पर एक विहंगम दृष्टि डालना, उनका यथोचित मूल्यांकन करना, किसी विद्वान लेखक का ही काम हो सकता है, जिसने उनके सम्पूर्ण साहित्य का मूल में अध्ययन किया हो, जो विदेशी साहित्य की विविध धाराओं से सुपरिचित हो और जो स्वयं भी एक उच्चकोटि का कलाकार हो। खेद है कि इन पंक्तियों के लेखक में ऐसी कोई योग्यता नाममात्र को भी नहीं है। इसलिए वह ज़्विग के भक्त की हैसियत से ही दो-चार शब्द लिख सकता है।

यदि हमसे पूछा जाय कि ज़्विग की रचनाओं में हमें कौनसी चीज पसंद आई तो हमारा यही उत्तर होगा कि उनका साहित्यिक व्यक्तित्व—मनुष्यता—जिसका निरंतर विकास उन्होंने अपनी अनंत साधना द्वारा किया था। किसी हिन्दी कवि के कथनानुसार प्रेम का अर्थ 'तलवार की धार पै धावनौ है' और ज़्विग की यह विशेषता थी कि वे एक कुशल नट की तरह इकतालीस वर्ष तक अचूक सावधानी और अडिग निश्चय से अपने साहित्यिक योग में डटे रहे। मनुष्य के गुण-दोष उसकी

रचनाओं में चित्रित हो जाते हैं और कुशल पारखी के लिए किसी सृष्टा की रचनाओं में उसकी आत्मा का दर्शन कर लेना कोई मुश्किल बात नहीं। यद्यपि यह संभव है कि कुछ लेखकों का व्यक्तित्व उनकी रचनाओं से मेल न खाता हो, वे अपनी रचनाओं से तटस्थ रहे हों अथवा उनका आचरण उनके प्रकाशित विचारों से बिल्कुल विपरीत रहा हो, तथापि यह नामुमकिन है कि कोई कलाकार अपने आपको बिल्कुल ही छिपा सके। कहीं-न-कहीं का एक वाक्य अथवा एक शब्द ही उसकी अंतरात्मा के सौंदर्य अथवा कुरूपता को घोषित करने के लिए पर्याप्त होगा, ठीक उसी प्रकार जिस तरह अंगूठे की निशानी या पैर के चिह्न से कोई चोर या खूनी पकड़ा जा सकता है।

गत पच्चीस वर्षों से हम स्टीफ़न ज्विग की रचनाओं का विशेष रूप से अध्ययन करते आये हैं। कइयों को हमने अनेक बार पढ़ा है, सुनाया है और अपने साथियों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहित भी किया है। ज्विग का आत्म-चरित 'कल की दुनिया' (The World of Yesterday) हमारा एक प्रिय ग्रंथ है और उनकी प्रथम पत्नी द्वारा लिखे हुए उनके जीवन-चरित (Stefan Zweig by Friderike Zweig) का हमने विधिवत् अध्ययन किया है। इस दीर्घ परिचय के बाद हम यही कह सकते हैं कि ज्विग अपनी रचनाओं में पूर्णरूप से तथा ईमानदारी के साथ विद्यमान हैं और अपनी रचना के साथ तादात्म्य ही उनकी सबसे बड़ी सफलता है।

ज्विग की रचनाओं में 'विराट' हमें बहुत पसंद आया है, केवल इसी कारण नहीं कि उसकी पृष्ठभूमि भारतीय है, बल्कि इस कारण से भी कि इसमें उन्होंने अपनी ही आत्मा को चित्रित कर दिया है।

हमें उस दिन की याद कभी न भूलेगी जब हमने 'विराट' को पहली बार पढ़ा था। प्रारम्भ से अंत तक हम मंत्र-मुग्ध से बने रहे और पुस्तक समाप्त होने पर हमारे मुँह से सहसा यही शब्द निकल पड़े,—"यह तो एक सुन्दर काव्य है।' तत्पश्चात् हमने इतनी बार इस कथा को अपने

मित्रों तथा साथियों को पढ़-पढ़कर सुनाया कि वह हमें कंठस्थ-सी हो गई । हम इस लघु उपन्यास का अनुवाद स्वयं ही करना चाहते थे, पर अपनी दीर्घ-सूत्रता के कारण ऐसा न कर सके । सौभाग्य की बात है कि इस शुभ कार्य को हमारे सुयोग्य सहायक और सहृदय बन्धु श्रीयुत यशपालजी ने बड़ी सफलता-पूर्वक कर दिया है और इसके लिए हम उनके अत्यन्त कृतज्ञ हैं ।

'विराट' के विषय में ज्विग की सुयोग्य पत्नी ने, जो स्वयं बड़ी अच्छी लेखिका हैं, लिखा है, "विराट के चरित्र में और स्टीफ़न ज्विग के चरित्र में एक प्रकार का भ्रातृत्व तथा ऐक्य विद्यमान है ।" मानो इस उपाख्यान के बहाने उन्होंने अपनी अन्तरात्मा को ही प्रतिबिंबित कर दिया है—बकौल किसी उर्दू कवि के 'काग़ज़ पै रख दिया है कलेजा निकालकर ।'

श्रीमती ज्विग 'विराट' के विषय में आगे लिखती हैं :

"कोई मनुष्य जब किसी पर चोट करता है अथवा उसके जुर्म के विषय में फैसला देता है तो उसे अपने अंधेपन में यह प्रतीत नहीं होता कि चोट किस पर पड़ रही है और किसका भाग्य-निर्णय वह कर रहा है, इसलिए उसे इस काम को तिलांजलि ही दे देनी चाहिए । ज्विग की रचनाओं में निरंतर इसी राग की ध्वनि सुनाई पड़ती है ।"

'विराट' के कुछ वाक्य तो इतने बढ़िया बन पड़े हैं कि उन्हें सदूक्तियों के संग्रह में स्थान मिलना चाहिए, यथा :

"संतों के एकांतवास की अपेक्षा कहीं अधिक सचाई दुःख की एक सिसकी में है ।" (पृष्ठ ८८)

"जो शासन करता है, वह दूसरों की स्वतंत्रता का अपहरण करता है, लेकिन सबसे बुरी बात तो यह है कि वह स्वयं अपनी आत्मा को गुलाम बनाता है ।" (पृष्ठ ७५)

"मैं किसी का भाग्य-विधाता नहीं बनूंगा । जो भी कोई दूसरे के भाग्य का फैसला करता है, वह अपराधी है ।" (पृष्ठ ७३)

"यह हो सकता है कि आदमी की निगाह में एक सेवा दूसरी से बड़ी दिखाई दे, लेकिन परमात्मा की निगाह में सब सेवाएं समान हैं।"

(पृष्ठ ६२)

"मुझे जो सीख मिली है वह अभागों से मिली है। मुझे जो कुछ दीखा है, उसका दर्शन दुःखियों और सदा जीवित रहने वाले मेरे भाई की निगाह ने कराया है।" (पृष्ठ ८८)

"जिसका कोई घर-बार नहीं, उसी की सारी दुनिया घर है। जिसने जीवन के बन्धनों को काट डाला है, उसी के हिस्से में सच्चा जीवन आया है।" (पृष्ठ ८०)

"कोई भी किसी के बारे में निर्णय देने का अधिकारी नहीं है।... दंड देना परमात्मा के हाथ की बात है, मनुष्य के हाथ की नहीं।"

(पृष्ठ ६४)

ज्विग के लिए ये वाक्य कोरमकोर सिद्धांत ही नहीं थे, वे व्यवहार में भी उनका प्रयोग करते थे। एक बार एक चोर पेरिस में होटल से उनका संदूक उठा ले गया। वह पकड़ा गया। ज्विग को भी कचहरी में जाना पड़ा। जब पुलिस अफसर ने पूछा, "आप इस चोर के खिलाफ मुकदमा दायर करेंगे ?" उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया, "हर्गिज़ नहीं।" परिणाम क्या हुआ, उसे ज्विग के ही शब्दों में सुन लीजिये :

"ज्योंही मैंने कहा 'हर्गिज़ नहीं' त्योंही उसकी प्रतिक्रिया तीन व्यक्तियों पर तीन तरह से हुई। चोर के (जो बेचारा दो पुलिसमैनों के हाथ में भौंचक्का-सा खड़ा हुआ था) चेहरे पर कृतज्ञता का जो भाव उदित हुआ, वह अवर्णनीय है और उसे मैं जिन्दगी भर नहीं भूल सकता। पुलिस अफसर ने संतोष-पूर्वक अपनी कलम रख दी। उसने सोचा कि चलो, मामला योंही निपट गया, अब व्यर्थ ही पन्ने न रंगने पड़ेंगे। लेकिन मेरे मकान-मालिक का तो चेहरा ही पीला पड़ गया। वह मुझ पर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा, 'यह तुम कर क्या रहे हो ? इन धूर्तों का तो खात्मा ही कर देना चाहिए। तुम नहीं जानते

कि इन जूंओं के मारे सैकड़ों भले आदमियों की नींद हराम होती है, इस तरह एक चोर को छोड़ देने से तो जनाव, सैकड़ों चोरों को प्रोत्साहन मिलेगा। आप अपनी माफी को वापस लीजिये।"...

"मैंने दृढ़ता-पूर्वक उत्तर दिया, 'मेरी चीज मुझे वापस मिल गई। मैं इस पर मुकदमा कदापि नहीं चलाऊंगा।"

ज्विग आगे लिखते हैं, "मैंने अपनी जिन्दगी में कभी किसी पर अभियोग नहीं लगाया था और इस खयाल से कि आज मेरी वजह से किसी को मजबूरन जेल का खाना नहीं खाना पड़ेगा, मैं और भी स्वाद से अपना भोजन करूंगा।"

ज्योंही ज्विग ने अपना संदूक लेने के लिए हाथ बढ़ाया कि वह चोर आगे बढ़कर विनम्रता-पूर्वक बोला, "अरे, नहीं जनाव, यह हो नहीं सकता। मैं खुद इसे आपके घर तक ले चलूंगा।" ज्विग लिखते हैं, "इस प्रकार मैं सड़क पर आगे-आगे चल रहा था और वह कृतज्ञ चोर उस भारी बोझ को लादे हुए मेरे होटल तक मेरे पीछे-पीछे।"

मनोभावनाओं के सूक्ष्मातिसूक्ष्म विश्लेषण में ज्विग का मुकावला करने वाले लेखक विरले ही होंगे। इतिहास की सूखी हड्डियों में जान डाल देना तो उनके वाएं हाथ का खेल था। उनमें एक अद्भुत मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टि थी। उनकी पुस्तक 'मेरी एंटोइनिटी' पर एक प्रसिद्ध फिल्म वनी थी। उक्त फिल्म की आलोचना करते हुए फरवरी सन् १९३९ की 'क्विवर' नामक पत्रिका में एक आलोचक ने लिखा था:

"आप इस फिल्म को जरूर देखें, पर साथ ही मैं इतना और भी कहूंगा कि आप स्टीफ़न ज्विग की किताब को भी पढ़ें और बार-बार पढ़ें और तव यह बात आपको स्पष्ट हो जायगी कि ग्रंथकार अपने पाठ-भवन में बैठकर धैर्य-पूर्वक और ईमानदारी के साथ जैसा सजीव चित्र बना सकता है वैसा बढ़िया चित्र हॉलीवुड के या दुनिया के तमाम अभिनेता और अभिनेत्रियां हजारों पौंड खर्च करके भी नहीं बना सकते।"

'ट्रांसफिगरेशन' (रूप-परिवर्तन) ज्विग की एक अत्युत्तम कहानी

है, जो कला की दृष्टि से संभवतः 'विराट' से भी बढ़कर होगी। उसके कुछ वाक्य सुन लीजिये :

"दानशीलता के आनन्द ने—दोनों हाथों से अपनी संपत्ति को लुटाकर प्रफुल्लित होने की भावना ने—समस्त विश्व से मेरा रिश्ता तोड़ दिया था और अब मैंने सोचा, आनन्द देना और आनन्द लेना कितना आसान है ! उन लोहे के तख्तों को ऊपर उठा देना भर काफी है, जो मनुष्य और मनुष्य के बीच में वाधा के रूप में विद्यमान हैं और उन तख्तों के उठते ही जीवन की धारा मनुष्य से मनुष्य की ओर प्रवाहित होना प्रारम्भ हो जाती है। ऊपर से तुमुल-ध्वनि करती हुई वह नीचे की ग्रोर गिरती है और फिर नीचे से उसकी फुहार उठकर अनंत की ओर जाने लगती है।"

"चांदी के कुछ सिक्कों से अथवा रंगीन कागज के कुछ टुकड़ों (नोटों) से दूसरों की चिंताओं को खत्म कर देना और आनन्द को वितरित करना कितना सरल है।"

"जीवन को वही समझता है, जो प्रेम करता है और जो दान करता है।"

ऐसा प्रतीत होता है कि उपर्युक्त वाक्य ज्विग के जीवन के मोटो (आदर्श वाक्य) थे और तदनुसार उन्होंने अपने व्यक्तित्व का निर्माण भी किया था।

नवयुवक लेखकों को प्रोत्साहित करना—छुटभइयों का मार्ग-प्रदर्शक बनना—ज़्विग के जीवन का मुख्य कार्य था और एतदर्थ उन्होंने अपना बहुत-कुछ समय, शक्ति तथा धन भी व्यय किया था।

उनके एक मित्र वरफल ने लिखा था, "ज्विग की तरह उदारतापूर्वक तथा मुक्तहस्त से अपने मित्रों की सहायता करने वाला दूसरा कोई लेखक विद्यमान नहीं।"

स्वर्गीय साहित्य-सेवियों को श्रद्धांजलि अर्पित करना अथवा साहित्यिक अग्रजों का गुणगान करना तो मानों ज्विग के हिस्से में ही आया था।

उनके लिखे हुए महत्त्वपूर्ण जीवन-चरित इस बात के प्रमाण हैं। रोम्यां रोलां की सर्वोत्तम जीवनी उन्हीं के द्वारा लिखी गई थी और टाल्स्टाय के चरित्र का विश्लेषण उन्होंने बड़ी खूबी के साथ किया है। सुप्रसिद्ध फरांसीसी लेखक बालज़क के जीवन-चरित के लिखने में उन्होंने आठ वर्ष लगा दिये थे।

क्या निजी और क्या राष्ट्रीय, क्या साहित्यिक अथवा क्या अंतर्राष्ट्रीय सभी व्यवहारों में ज्विग एक मनुष्य थे और मनुष्यता की रक्षा करना, मानवता को पाशविकता के आक्रमण से बचाना, यही उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य था। अपने अंतिम पत्र में उन्होंने लिखा था, "मुझे बौद्धिक परिश्रम से ही सबसे अधिक आनन्द मिला है और मैंने व्यक्तिगत स्वाधीनता को ही संसार की सर्वोत्तम वस्तु समझा है।"

उनके बौद्धिक परिश्रम की कल्पना इसीसे की जा सकती है कि उन्होंने अपने जीवन में दो लाख पृष्ठ लिखे थे और अपनी रचनाओं को संक्षिप्त करने तथा उनमें प्रवाह लाने की धुन में उन्होंने कम-से-कम आठ लाख पृष्ठ लिखकर फाड़ फेंके थे, और व्यक्तिगत स्वाधीनता की रक्षा के लिए उन्होंने क्या-क्या कष्ट नहीं सहे ? अधिक क्या कहा जाय, उसी की रक्षा के लिए उन्होंने अपने प्राण तक दे दिये ! उन्होंने कभी किसी की गुलामी नहीं की। आस्ट्रियन सरकार उन्हें अपना राजदूत बनाकर विदेश भेजना चाहती थी, पर उन्होंने उस गौरव को तुच्छ ही समझा।

मनुष्य-मात्र में त्रुटियां पाई जाती हैं। ज्विग में भी वे अवश्यमेव रही होंगी। वे देवता नहीं थे और न किसी को देवत्व प्रदान करना उन्हें प्रिय था।

"देवत्व प्रदान करना नहीं, बल्कि मानवी रूप में दिखलाना ही मनोवैज्ञानिक सृष्टा का सर्वोच्च कार्य है।"

ज्विग का यह वाक्य प्रत्येक चरित-लेखक के लिए आदर्श है।

जो गुण ज्विग की रचनाओं को विशेषता प्रदान करते हैं, उनमें मुख्य है उनकी मनुष्यता और तत्पश्चात् उनकी अनुभूतियों की विविधता।

जब उन्हें पिछले युद्ध में इंग्लैंड छोड़कर आस्ट्रिया लौटना पड़ा था, उस समय का वर्णन करते हुए वे आत्म-चरित के अन्त में लिखते हैं :

"सूर्य पूर्णता तथा उज्ज्वलता के साथ अपनी किरण फैला रहा था। घर को लौटते हुए मुझे स्वयं अपनी छाया सामने दीख पड़ी, ठीक उसी प्रकार जिस तरह सन् १९१४ के महायुद्ध की छाया मुझे इस नवीन युद्ध में दीख रही थी। इन तमाम वर्षों में यह अनिवार्य छाया मुझसे दूर नहीं हुई। मेरे दिन-रात के विचारों के चारों ओर वह चक्कर काटती रही है और संभवतः उसकी अंधकारमय रेखा इस पुस्तक के पृष्ठों पर भी दृष्टिगोचर होगी। लेकिन आखिर छाया भी तो प्रकाश से ही उत्पन्न होती है। जिस व्यक्ति ने उषा और अंधकार, युद्ध तथा शांति, उतार तथा चढ़ाव सभी का अनुभव किया है, केवल उसी के बारे में यह कहा जा सकता है कि वह दर-असल जीवित रहा है।"

अपनी इस परिभाषा के अनुसार स्टीफ़न ज्विग ने जीवन को समझा था और खूब समझा था। मानवीय कमजोरियों या त्रुटियों को नहीं, उसकी रचनात्मक शक्ति को ही वे महत्त्व देते थे। वे कहते थे :

"वही वास्तव में सच्ची जिंदगी व्यतीत करता है, जो अपनी जीवन-शक्ति को भावी संतान के लिए व्यय कर देता है, और जो उसे भविष्य को अर्पित कर देता है।"

स्टीफ़न ज्विग अपनी रचनाओं में विद्यमान हैं। 'विराट' में पाठक उन्हीं के सात्विक तथा उज्ज्वल रूप का प्रतिबिम्ब देखेंगे—आकर्षक तथा मनोहर, विनम्र और प्रभावशाली।

'कर्मण्येवाधिकारस्ते' के संदेश को इस खूबी के साथ उपस्थित कर देने वाले उस अमर कलाकार की सेवा में हमारा सहस्र बार प्रणाम !

**—बनारसीदास चतुर्वेदी**

# स्टीफन ज़्विग
## (एक रेखाचित्र)

नंवबर, १६३१। सल्ज़बर्ग (आस्ट्रिया) का एक बुड्ढा पोस्टमैन हांफता हुआ, चिट्ठियों, तारों, अखबारों और किताबों के पुलिंदे से लदा हुआ, एक साहब की कोठी की सीढ़ियां चढ़ रहा था। वैसे तो उनकी रोज़ की डाक ही काफ़ी भारी होती थी, पर आज तो उसने मानो कमर ही तोड़ दी ! बात यह हुई थी कि आज एक आस्ट्रियन लेखक की पचासवीं वर्ष-गांठ थी। वह जर्मन भाषा के एक महान् ग्रंथकार थे और जर्मनी के समाचार-पत्र अपने कलाकारों की रजत-जयंती बड़ी शान के साथ मनाया करते थे। इसी कारण आज की डाक बहुत भारी हो गई थी।

इंसल वरलैग नामक प्रकाशन-संस्था ने लेखक की सब किताबों की तथा भिन्न-भिन्न भाषाओं में उनके जो अनुवाद हुए थे, उनकी सूची पुस्तकाकार प्रकाशित करके भेंट-स्वरूप भेज दी थी। उस सूची में संसार की प्राय: मुख्य-मुख्य भाषाएं आ गई थीं, यहां तक कि अंधों के लिए भी उनकी किताबें ब्रेल-पद्धति में लिख दी गई थीं। पाठकों को यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि जगत् के इस अत्यंत लोकप्रिय लेखक का नाम था स्टीफ़न ज़्विग। जिन भाषाओं में उनके ग्रंथों के अनुवाद हो चुके हैं, उनके नाम सुन लीजिये :

| | | |
|---|---|---|
| १. आर्मीनियन | २. फ़रांसीसी | ३. नार्वेजियन |
| ४. बलगेरियन | ५. जार्जियन | ६. पोलिश |
| ७. कैटेलन | ८. यूनानी | ९. पोर्चुगीज़ |
| १०. चीनी | ११. हेब्र | १२. रूमानियन |

| | | |
|---|---|---|
| १३. कोशियन | १४. हंगेरियन | १५. रशियन |
| १६. जैक | १७. इटैलियन | १८. सर्वियन |
| १९. डैनिश | २०. जापानी | २१. स्पेनिश |
| २२. डच | २३. लैटिन | २४. स्वीडिश |
| २५. अंग्रेजी | २६. लिथूनियन | २७. यूक्रेनियन |
| २८. फ़िनिश | २९. मराठी | ३०. यिड्डिश |

एक वार 'लीग ऑव नेशंस' (राष्ट्र-संघ) की 'अंतर्राष्ट्रीय बौद्धिक सहयोग' नामक संस्था ने जांच करके अपनी रिपोर्ट में लिखा था—"इस समय संसार में सबसे अधिक अनुवादित ग्रंथकार स्टीफ़न ज़्विग हैं।"

स्टीफ़न ज्विग का जन्म सन् १८८१ में वियना में हुआ था। उनके पिता मोराविया के यहूदी थे और वह वड़े चतुर व्यापारी थे। अपने कौशल के कारण वह अपने पचासवें वर्ष में करोड़-पति बन गये थे। ज़्विग की माता इटली के अनकोना नामक स्थान में पैदा हुई थीं और इटैलियन तथा जर्मन दोनों भाषाओं को बखूबी बोल सकती थीं। ज़्विग के नाना के कुटुंबी स्वीटज़र-लैंड की सीमा के निकट रहते थे और वहां से वे भिन्न-भिन्न देशों को चले गये थे। कोई फ्रांस गये, कोई इटली तो कोई अमरीका। इस प्रकार उस परिवार के बच्चे जन्म से ही कई भाषाएं बोल सकते थे। अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण को विकसित करना उनके लिए सर्वथा स्वाभाविक था।

वियना नगरी अपने साहित्यिक तथा सांस्कृतिक वातावरण के लिए यूरोपभर में प्रसिद्ध थी। वह दो हजार वर्ष पुरानी थी और कम-से-कम एक हजार वर्ष से तो उसकी सांस्कृतिक परंपरा बिना किसी बाधा के उत्तरोत्तर बढ़ती चली आ रही थी।

उदाहरण के लिए वहां की कॉफ़ी की दूकानें लीजिये। आने-दो आने देने पर वहां कोई भी व्यक्ति चाय या कॉफ़ी पी सकता था और साथ में वियना के ही नहीं, जर्मनी, फ्रांस, इटली और अमरीका तक के खास-खास बीसियों अखबार तथा पत्र भी पढ़ सकता था। इन दुकानों पर साहित्यिक लोग अनेक विषयों पर वार्तालाप तथा वाद-विवाद किया करते थे। लिखने के लिए वहां कागज़-कलम का प्रबन्ध था और वे अपनी डाक भी वहां निपटा सकते थे। कभी-कभी वे ताश भी खेलते थे। दरअसल इन दूकानों ने सार्वजनिक क्लब का रूप धारण कर लिया था। आस्ट्रिया के सांस्कृतिक धरातल को ऊंचा करने और वहां के निवासियों के दृष्टिकोण को अंतर्राष्ट्रीय बनाने में चाय-कॉफ़ी की इन दूकानों का जबरदस्त हाथ था।

प्रारंभिक पाठशाला में पढ़ने के बाद ज़्विग को जिनेशियम नामक विद्यालय में पढ़ने के लिए भेजा गया। वहां की नीरस पढ़ाई के बोझ का मनोरंजक ब्यौरा ज़्विग के आत्मचरित में मिलता है। जीवित भाषाओं में फ्रेंच, अंग्रेजी तथा इटेलियन तो पढ़ाई ही जाती थीं, पर उनके साथ-साथ ग्रीक तथा लैटिन का भी अध्ययन करना आवश्यक था। मातृभाषा जर्मन अलग—रेखागणित और विज्ञान इनके अलावा। ज़्विग ने इस शुष्क जीवन का जो करुणोत्पादक चित्र खींचा है, वह भारतीय विद्यालयों की वर्तमान शिक्षण-पद्धति से मिलता-जुलता है। यूरोप में तो परिस्थिति बहुत-कुछ बदल चुकी है। शिक्षा अब वहां भार-स्वरूप नहीं रही, विद्यार्थी समानता के धरातल पर अध्यापकों से बातचीत करते हैं और उनकी व्यक्तिगत आकांक्षाओं तथा रुचियों का भी खयाल रखा जाता है, पर हमारे मुल्क में तो 'वही रफ्तार बेढंगी जो पहले थी सो अब भी है।'

उपर्युक्त कृत्रिम वातावरण के होते हुए भी यदि स्टीफ़न

ज़्विग ने अपनी प्रतिभा का विकास कर लिया तो इसका श्रेय उनके क्लास के विद्यार्थियों की स्पर्धा की भावना को मिलना चाहिए। एक तो उन दिनों वियना में नाटक, साहित्य तथा कला के लिए वैसे ही काफ़ी उत्साह था। समाचार-पत्र खासतौर पर इन विषयों पर लिखा करते थे, नगर की किसी भी साहित्यिक या सांस्कृतिक घटना को वे उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखते थे और फिर जिस कक्षा में स्टीफ़न ज़्विग भर्ती हुए थे, वह विशेष रूप से कला-प्रेमी और साहित्यानुरागी थी। क्लास में पढ़ाया कुछ जाता था और छात्र छिप-छिपकर पढ़ते कुछ और ही थे! लैटिन के व्याकरण के पृष्ठों के पीछे कविताओं के पन्ने जोड़ दिये जाते थे और गणित की कापियों पर सुन्दर-से-सुन्दर काव्यों की नकल कर दी जाती थी। शिक्षक लोग शिलर की कविताओं पर लेक्चर देते थे और विद्यार्थी लोग डैस्क में छिपा-छिपाकर नीत्शे के ग्रंथ पढ़ते थे! छात्रों में यह प्रतियोगिता रहती थी कि हमारा ज्ञान अद्यतन (अप-टु-डेट) रहे। वे पुस्तक-विक्रेताओं की दूकानें छान डालते थे, नवीन किताबों की प्रतीक्षा बड़ी उत्कण्ठा से करते थे, पुस्तकालयों से ग्रंथ लाते थे और जो कोई विद्यार्थी नई बात का पता लगा लेता तो वह दूसरे संगी-साथियों को उसे बतलाने में गौरव अनुभव करता था। उन लोगों में होड़-सी लगी रहती थी कि कौन पहले किसी नवीन चीज का पता लगा ले। इसके सिवा विद्यार्थियों की प्रतिभा के विकास पर सबसे अधिक प्रभाव डाला वियना की चाय॰ कॉफ़ी की दूकानों ने, जिनका ज़िक्र हम ऊपर कर चुके हैं। सत्रह वर्ष की उम्र में स्टीफ़न ज़्विग ने जिस लगन के साथ साहित्य का अध्ययन किया था, वह लगन अपने जीवन के उत्तर भाग में वह कदापि प्रदर्शित नहीं कर सके। वाल्ट ह्विटमैन तथा अन्य कवियों की बीसियों कविताएं उन्हें कण्ठस्थ थीं। आगे

चलकर स्टीफ़न ज़्विग को साहित्य-जगत् में जो विश्वव्यापी कीर्ति मिली, उसकी नींव विद्यार्थी-जीवन में ही पड़ चुकी थी। उन्होंने लिखा है :

"विद्यार्थी-जीवन की साहित्यिक तथा सांस्कृतिक जिज्ञासा ने मेरे रक्त में प्रवेश कर लिया था—बौद्धिक प्रेरणा मेरी नस-नस में व्याप्त हो गई थी और आगे चलकर जो कुछ मैंने पढ़ा और सीखा, उसका दृढ़ आधार उन्हीं वर्षों का अध्ययन है। यदि बाल्यावस्था में किसी आदमी का शरीर निर्बल रह जाय तो बड़ी उम्र में वह उसकी क्षति-पूर्ति कर सकता है, पर यदि कोई अपने में विश्वात्मा का अनुभव करना चाहता हो तो उसके लिए यह अनिवार्य है कि वह यौवनावस्था में ही आत्मा की ग्रहणशक्ति को विकसित कर ले।"

जब स्टीफ़न ज़्विग केवल उन्नीस वर्ष के थे, जर्मन-काव्य-ग्रंथों के एक सर्वश्रेष्ठ प्रकाशक ने उनकी कविताओं का एक संग्रह छापने के लिए स्वीकृत कर लिया। उस समय उस नवयुवक कवि को जो हर्ष हुआ, उसका बड़ा आकर्षक वर्णन उन्होंने किया है। उस ग्रंथ की मुख्य-मुख्य समाचार-पत्रों तथा प्रतिष्ठित कवियों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की थी और जर्मनी के एक सर्वोत्तम गायनाचार्य ने उनकी छः कविताओं को स्वर-लिपियों में बद्ध कर दिया था।

पर स्टीफ़न ज़्विग अपनी रचनाओं के विषय में अत्यन्त सावधान और काफी कठोर रहे। उस काव्य-ग्रंथ की एक भी कविता उन्होंने अपने संग्रह में शामिल नहीं की! उन्होंने अपने साहित्यिक जीवन का सिद्धांत बना लिया था कि कोई भी अधपकी चीज उनके हाथ से न निकलने पावे। इसी कारण उन्होंने अपनी प्रारम्भिक जीवनी की कितनी ही पुस्तकें दुबारा

नहीं छपने दीं ! १६०१ में उनकी प्रथम पुस्तक छपी थी और सितम्बर सन् १९४२ में, अपने आत्मघात के पहले, उन्होंने अपनी अंतिम पुस्तक प्रकाशक को भेज दी थी। इस बयालीस वर्षीय अखण्ड साहित्यिक तपस्या का दृष्टांत विश्व-साहित्य में मुश्किल से ही मिलेगा।

हम पहले वतला चुके हैं कि संसार की तीस भाषाओं में ज़्विग की पुस्तकों का अनुवाद हो चुका है। जर्मनी, फ्रांस और इटली में वह समान रूप से लोकप्रिय थे। उनके ग्रंथ लाखों की संख्या में छपकर जर्मनी में घर-घर फैल गये थे। इटली में मुसोलिनी उनकी रचनाओं के प्रशंसकों में अग्रगण्य थे और रूस में मैक्सिम गोर्की ने उनके ग्रंथों के रूसी अनुवाद की भूमिका लिखी थी। अंग्रेजी में उनके सत्रह से अधिक ग्रंथों का अनुवाद हो चुका है। उनकी किसी-किसी किताव की पचास-पचास हजार प्रतियां एक वर्ष में विक गईं। उनकी कितनी ही पुस्तकों के आने पर नाटक वनाये गए, कितनों ही पर फिल्में बनाई गईं और वाज़-वाज़ पुस्तक ढाई-ढाई लाख छपी। फिर संसार का सबसे अधिक अनुवादित ग्रंथकार होना क्या कम गौरव की बात है ?

ज़्विग ने वड़ी विनम्रता के साथ अपनी इस सफलता का रहस्य आत्म चरित में वतलाया है। वह लिखते हैं :

"मुझमें एक वड़ी भारी कमजोरी है, वह यह कि किसी भी अनावश्यक वाक्य या प्रसंग को पढ़कर मुझे वड़ी झुंझलाहट होती है, किसी भी अस्पष्ट वात से मेरा धैर्य छूट जाता है और कोई भी चीज़, जो पुस्तक के प्रवाह में वाधा डाले, मेरे लिए असह्य हो उठती है। वस मेरी यह स्वभावगत कमजोरी ही मेरी सफलता का मूल कारण है।"

ज़्विग के लिखने का तरीका यह था कि पहले तो वह जितना

भी मसाला किसी विषय पर मिल सकता, इकट्ठा करते थे और उसके लिए वह कोना-कोना छान डालते थे—क्या मजाल कि कोई चीज़ उनकी तेज निगाह से छूट जाय—और फिर प्रथम पाण्डुलिपि तैयार कर लेते थे। तब उनका वास्तविक कार्य प्रारम्भ होता था। अगर पहली कापी एक हजार पृष्ठ की होती तो अंतिम में सिर्फ दो सौ ही पृष्ठ बाकी रह जाते थे! शेष आठ सौ को रद्दी की टोकरी में फेंक देना कोई आसान काम न था, पर इसमें उन्हें अलौकिक आनन्द मिलता था।

एक बार ज़्विग महोदय बड़े प्रसन्न दीख पड़ रहे थे। उनकी पत्नी ने उनसे कहा, "मालूम होता है कि आज आपने अपनी किसी रचना की काफ़ी काट-छांट कर डाली है!"

ज़्विग ने बड़े अभिमान के साथ उत्तर दिया, "हां, मैंने एक पैराग्राफ को साफ उड़ा दिया और घटना-प्रवाह में और भी गति ला दी।"

'काता और ले दौड़े' की नीति के अनुयायी इससे कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

ज़्विग लिखते हैं :

"मैंने तमाम बाहरी सम्मानों को अस्वीकार ही किया है। कभी किसी पद या प्रतिष्ठा अथवा उपाधि इत्यादि को ग्रहण नहीं किया। न किसी सभा का प्रधान बना और न किसी सोसाइटी या कमेटी अथवा परिषद् से अपना सम्बन्ध रखा। भोजों में शामिल होना मेरे लिए अत्यन्त कष्टप्रद रहा है और किसी से कुछ मांगने से पहले ही—चाहे वह प्रार्थना परोपकारार्थ ही क्यों न हो—मेरी ज़बान सूख जाती है। मैं जानता हूं कि आज की दुनिया में इस प्रकार के ख्यालात दकियानूसी ही माने जावेंगे। पद और उपाधि इत्यादि से एक फायदा तो होता

ही है, वह यह कि ग्रादमी धक्कम-धक्के से वच जाता है, पर मेरे मन में एक ग्रांतरिक ग्रभिमान है, जिसे मैंने ग्रपने पिताजी से पैतृक संपत्ति के रूप में पाया है ग्रौर इसी ग्रभिमान के कारण मैं इन तमाम उपाधिरूपी व्याधियों से बचा रहा हूं।"

ज़्विग के पिताजी करोड़पति थे ग्रौर ग्रव्वल नम्बर के स्वाभिमानी। वह किसी का भी ग्रहसान ग्रपने ऊपर नहीं लेना चाहते थे। उनके लिए मान-सम्मान प्राप्त करना बहुत ग्रासान था, पर ग्रात्माभिमानवश वह उनसे दूर ही भागते रहे। ज़्विग ने भी इसी नीति का ग्रनुसरण किया। जिस प्रकार कोई नट बांस के संतुलन द्वारा रस्सी पर चला जाता है ग्रौर इधर-उधर नहीं झांकता, उसी प्रकार ज़्विग ने माता सरस्वती की ग्राराधना में कभी कोई व्यवधान नहीं ग्राने दिया। 'समत्वं योगमुच्यते', योग की इस परिभाषा के ग्रनुसार ज़्विग सचमुच साहित्य-योगी थे।

ज़्विग ने ग्रपने जीवन-चरित में नवयुवक लेखकों को एक बड़े पते की बात बतलाई है। वह लिखते हैं:

"यदि कोई नवयुवक लेखक ग्रपने लक्ष्य के विषय में ग्रनिश्चित हो तो उसे मैं एक ही परामर्श दूँगा, वह यह कि वह किसी महान् लेखक की छोटी-मोटी पुस्तक का ग्रनुवाद करे या फिर उसके ग्राधार पर कोई ग्रंथ लिख दे। नवीन लेखक जो भी सेवा ग्रात्म-त्याग की भावना से करेगा, उसमें उसे ग्रपनी कृति की ग्रपेक्षा सफलता मिलने की विशेष संभावना रहेगी; क्योंकि भक्तिपूर्वक किया हुग्रा कोई भी कार्य कदापि निष्फल नहीं होता।"

ज़्विग का यह ग्रनुभूत प्रयोग था ग्रौर यह हृदयंगम करने की चीज है। वरहेरन नामक फ्रांसीसी कवि की रचनाग्रों के

अनुवाद में उन्होंने दो-ढाई वर्ष लगा दिये थे और इस प्रकार अपनी स्थायी कीर्ति की नींव रखी थी। अनुवाद इतना वढ़िया हुआ था कि खुद फ्रेंच भाषा की अपेक्षा जर्मन भाषा में वरहेरन का नाम अधिक प्रसिद्ध हो गया !

महाकवि चकवस्त ने कहा था—'दीन क्या है, किसी कामिल की इवादत करना,' अर्थात् योग्यों की पूजा ही वास्तविक धर्म है। ज़्विग की रचनाओं को देखकर यह निश्चय हो जाता है कि उन्होंने भी योग्यों की पूजा को ही अपना साहित्यिक धर्म मान लिया था। यद्यपि ज़्विग अच्छे कवि थे, वहुत वढ़िया नाटककार औरयूरोप में उनके मुकावले के आलोचक तो वहुत ही कम पाये जाते थे, तथापि उनकी कीर्ति मुख्यतया उनके लिखे जीवन-चरितों से ही चिरस्थायी रहेगी। उनका लिखा रोम्यां रोलां का जीवन-चरित एक आदर्श ग्रंथ माना जायगा। इसके सिवा बालज़क, डिकिंस, स्टेण्डहल, फाउचे, ऐरेसमस, मेरी स्टुआर्ट, मेरी ऐण्टोइनेटी और फ्रायड इत्यादि पर लिखे हुए उनके विस्तृत निवन्ध, ग्रंथ अथवा रेखाचित्र उनकी चरित्र-चित्रण की असाधारण योग्यता को प्रकट करते हैं। चरित-नायकों या चरित-नायिकाओं की अंतरात्मा में प्रवेश करके उनकी जीती-जागती मूर्त्ति पाठकों के सम्मुख खड़ी कर देने की कला में वह अद्वितीय थे।

किसी प्रतिभाशाली लेखक के प्रसिद्धि प्राप्त कर लेने पर तो उसके सहस्रों प्रशंसक मिल जाते हैं। ज़्विग की दूरदर्शिता की तारीफ करनी चाहिए कि वह छिपे हुए हीरों को प्रकाश में लाया करते थे। उनका परिचय रोम्यां रोलां से जिस प्रकार हुआ, उसकी कथा वड़ी मनोरंजक है। ज़्विग महोदय एक वार किसी रूसी महिला के यहां निमंत्रित किये गए। वह स्थापत्य-कला में विशेषज्ञ थीं और मूर्त्तियां वनाया करती थीं। ज़्विग

महोदय ठीक वक्त पर उनके यहां पहुँचे, पर श्रीमतीजी गैर-हाजिर थीं—रूसी लोग भी शायद हम भारतीयों की तरह ही समय के गैरपाबन्द होते हैं, इसलिए ज़्विग ने बैठे-ठाले एक पत्रिका हाथ में उठा ली। वह रोम्यां रोलां की मित्र-मण्डली द्वारा संपादित थी और 'जीन क्रिस्टोफ़ी' नामक उपन्यास, जिस पर आगे चलकर नोबुल पुरस्कार मिला, इसी पत्रिका में धारा-वाहिक रूप से निकल रहा था। उन महिला के आने पर ज़्विग ने उनसे पूछा, "ये रोम्यां रोलां महाशय कौन हैं ?" वह इसका कोई संतोषजनक उत्तर न दे सकीं। पेरिस पहुंचकर ज़्विग ने रोम्यां रोलां को तलाश करना शुरू किया, पर किसी से उनके बारे में पूरा-पूरा पता न चला ! आखिरकार ज़्विग ने अपनी एक पुस्तक रोम्यां रोलां के नाम भेज दी। उन्होंने उत्तर में लिखा, "आप मेरे यहां पधारने की कृपा कीजिये।" ज़्विग उनसे मिले और दोनों में जो घनिष्ठ मित्रता स्थापित हो गई, वह जीवन के अन्त तक रही। १९२१ में उन्होंने जर्मन-भाषा में रोम्यां रोलां का जीवन-चरित प्रकाशित किया, जिसका अनुवाद अंग्रेजी में भी हो चुका है।

ज़्विग संसार के नागरिक थे। अपनी कलम से उन्होंने कभी एक भी वाक्य ऐसा नहीं लिखा था, जो जातीय विद्वेष को फैलाने में सहायक होता। यद्यपि राष्ट्रीयता के नक्कारखाने में उनकी तूती की आवाज किसी ने नहीं सुनी, तथापि वह अपने निर्दिष्ट मार्ग से कभी विचलित नहीं हुए। जिन्होंने प्रथम महा-युद्ध में (१९१४ से १९१८ तक) विचार-स्वातंत्र्य का झण्डा ऊंचा रखा और जो घृणा तथा विद्वेष के वातावरण से ऊंचे उठ सके, ऐसे यूरोपियन लेखकों में रोम्यां रोलां तथा स्टीफ़न ज़्विग अग्रगण्य थे और पिछले महायुद्ध का दुष्परिणाम दोनों को ही भयंकर रूप से भोगना पड़ा। दोनों ही हिटलरशाही की बलि-

वेदी पर बलिदान हो गये !

यदि किसी लेखक को नाज़ीवाद के अत्याचारों को सबसे अधिक मात्रा में सहन करना पड़ा तो वह स्टीफ़न ज़्विग ही थे। उनकी किताबें लाखों की संख्या में जर्मनी में फैली हुई थीं। वे सब जब्त कर ली गईं, जलवा दी गईं और बची-खुची तालों में बन्द कर दी गईं। उन्हें एक मुल्क से दूसरे मुल्क को भागे-भागे फिरना पड़ा। उनका लाखों की कीमत का साहित्यिक संग्रहालय, जिसकी गणना संसार के सर्वश्रेष्ठ निजी संग्रहालयों में की जानी चाहिए, छिन्न-भिन्न हो गया और उनके पारिवारिक कष्ट भी पराकाष्ठा को पहुंच गये। अपनी पूज्य वृद्धा माता की अंतिम बीमारी के दिनों में वह उनकी मृत्युशय्या के पास भी न पहुंच सके ! ज़्विग आस्ट्रियन थे, यहूदी थे, संसार के नागरिक थे, उनका दृष्टिकोण अंतर्राष्ट्रीय था और वह शांतिवादी थे। इनमें से एक ही चीज़ उनकी अनुभूतियों को कष्टमय बनाने के लिए पर्याप्त थी, पर उनमें तो ये सभी एकत्र हो गई थीं ! इसलिए भरपूर मात्रा में उन्हें कालकूट का पान करना पड़ा—ज़हर के एक-दो प्याले नहीं, घड़े-के-घड़े पीने पड़े !

इस संक्षिप्त लेख में हम ज़्विग के आत्मचरित का शतांश भी नहीं दे सकते। यहाँ हम उनका अंतिम पत्र प्रकाशित करते हैं, जो उन्होंने अपनी पत्नी के साथ विषपान करने के पहले २२ फरवरी, १९४२ को लिखा था :

"स्वेच्छा से और अपने होश-हवास की दुरुस्तगी में अपने प्राण-त्याग करने के पहले मैं अपना अंतिम कर्त्तव्य-पालन करना चाहता हूं। मैं ब्रेज़िल देश की आश्चर्यजनक भूमि को, जिसने मुझे प्रेमपूर्ण आश्रय दिया, हार्दिक धन्यवाद देता हूं। इस भूमि-खंड के प्रति मेरे हृदय में श्रद्धा दिनों-दिन बढ़ती ही गई है और यदि कोई ऐसा देश है, जहां मैं अपना जीवन पुनः प्रारम्भ कर

सकता था, तो वह ब्रज़ील ही है; क्योंकि मेरी मातृ-भाषा की भूमि मेरे लिए समाप्त हो चुकी है और मेरी आध्यात्मिक मातृ-भूमि यूरोप ने आत्मघात कर लिया है।

"लेकिन अब मैं साठ वर्ष से ऊपर हो चुका और अब बिल्कुल नवीन जीवन प्रारम्भ करने के लिए असाधारण शक्ति की आवश्यकता है। जो शक्ति मुझमें थी, वह वर्षों तक लामकान होकर इधर-से-उधर भागने-फिरने में खर्च हो चुकी है। इसलिए मैं यही ठीक समझता हूं कि इस जिंदगी का खात्मा कर दिया जाय। जिस जीवन में मुझे बौद्धिक परिश्रम से सबसे अधिक आनन्द मिला और जिसमें मैंने व्यक्तिगत स्वाधीनता को ही संसार की सर्वोच्च वस्तु समझा, उसकी समाप्ति ठीक समय पर, जबकि मैं तनकर खड़ा हो सकता हूं, हो जानी चाहिए। सम्पूर्ण मित्रमंडल को मैं नमस्कार करता हूं। ईश्वर करे, दीर्घ-रात्रि के बाद उषा के दर्शन करने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हो। मैं तो अपना धैर्य खो चुका हूं, इसलिए उसके पहले ही विदा होता हूं।"

पैट्रोपोलिस —**स्टीफ़न ज्विग**
२२-२-१९४२

जहां तक हृदय की कोमल भावनाओं के विश्लेषण और चित्रण का संबंध है, ज्विग की गणना संसार के सर्वश्रेष्ठ लेखकों में कवींद्र रवींद्र और रोम्यां रोलां के साथ ही की जायगी; पर जहाँ लेखन-प्रवृत्ति की वफ़ादारी का प्रश्न है, ज़्विग निस्संदेह अद्वितीय थे। जिंदगी के जो उतार-चढ़ाव उन्होंने देखे, जिस तरह बेघरबार होकर उन्हें एक देश से दूसरे देश को भागना पड़ा, यहूदी होने के कारण उन्हें घृणा का जितना अधिक शिकार

वनना पड़ा ग्रौर ग्रपनी कोमल भावनाग्रों पर जितने ज़बरदस्त ग्राघात सहने पड़े, उनके मुकाबले में संसार के वड़े-से-वड़े साहित्य-सेवियों की तपस्या फीकी पड़ जायगी। ज़्विग दुःखों के विश्वविद्यालय में से ग्राचार्य होकर निकले थे, जवकि दूसरे लोग केवल प्रवेशिका परीक्षा पास कर पाते हैं या हद-से-हद स्नातक ही बन पाते हैं।

संभवतः कुछ महानुभाव ज़्विग के ग्रात्मघात के महत्त्व को न समझ सकेंगे। उनसे हमारा ग्रनुरोध है कि वे उनके विस्तृत ग्रात्मचरित को पढ़ें। वीणा के तार भला घन की चोटों को कवतक सहन कर सकते थे!

यद्यपि हिटलरशाही तथा नाज़ीवाद को खासी करारी चोटें सहनी पड़ी हैं ग्रौर दोनों ही ग्राज धराशायी होकर धल चाट रहे हैं, तथापि जो मर्मांतक चोट ज्विग ने ग्रपने इस ग्रात्मचरित से दी है, उसकी कसक सवसे ग्रधिक व्यापक होगी।

ज्विग का ग्रात्मचरित ग्रौर ग्रात्मवलिदान इस वात का प्रमाण है कि सहस्रों वायुयान तथा लाखों वम जो काम नहीं कर सकते, वह एक दृढ़-प्रतिज्ञ ग्रात्मा कर सकती है। विशाल-काय हाथी के क्षुद्र चींटी द्वारा मारे जाने की वात सच है या नहीं, हम नहीं जानते, पर नाज़ीवाद के भूत के लिए ज्विग की जीवनी शिव की विभूति है। एक साहित्य-साधक सती की तरह साधना करके ग्रौर ग्रपनी समस्त शक्तियों को केन्द्रित करके कितना ऊंचा उठ सकता है, ज्विग का जीवन इसका एक उज्ज्वल दृष्टांत है।

ग्रन्तर्राष्ट्रीय प्रेम तथा विश्वव्यापी शांति के जिन सिद्धांतों के लिए ज्विग जिये ग्रौर मरे, वे सिद्धांत ग्राज भी संसार में स्थापित नहीं हो पाये ग्रौर ग्राज भी जगत् के ग्राकाश में घृणा

तथा विद्वेष की घटाएं छाई हुई हैं। पर यह अंधकारमय रात्रि बहुत दिनों तक नहीं रहेगी और जिस उषा का स्वप्न ज्विग ने देखा था, उसके कभी-न-कभी दर्शन अवश्य होंगे।

जिस महामानव ने अपनी जीवन-ज्योति द्वारा द्वेष के अंधकार को दूर करने और प्रेम के प्रकाश को लाने के लिए भरपूर प्रयत्न किया और फिर जिसने अपनी इस जीवन-ज्योति को नाटकीय ढंग से बुझाकर उस पर्दे की वीभत्स कालिमा के पूर्ण रूप से दर्शन करा दिये, उस अद्वितीय साहित्य-साधक स्टीफ़न ज्विग की स्मृति में हमारी यह श्रद्धांजलि अर्पित है।

ज्विग अमर हैं और वह दिन शीघ्र ही आनेवाला है, जब यूरोप की तरह भारतवर्ष में भी उनके ग्रंथ लोकप्रिय होंगे और उन्हें अक्षय कीर्ति प्राप्त होगी :

**कीर्तिर्यस्य स जीवति।**

—बनारसीदास चतुर्वेदी

## अनुक्रम

□□



□□

विराट

●

## आख्यान

**यह उन विराट की कथा है, जिन्हें उनके देशवासियों ने उनके चार गुणों के लिए सम्मानित किया था। फिर भी विजेताओं के इतिहास अथवा संतों के ग्रंथों में कहीं एक शब्द भी उनके विषय में नहीं मिलता और उनकी स्मृति लोगों के मन से उतर चुकी है।**

१

अपने ज्ञान के प्रकाश से अपने सेवकों के हृदय परिपूर्ण करने के लिए जिस समय भगवान बुद्ध इस भूमि पर निवास करते थे, उससे कुछ ही दिन पहले राजपूताना के महाराजा की प्रजा के रूप में वीरवाघ प्रदेश में विराट नाम का एक कुलीन और सत्यनिष्ठ व्यक्ति रहता था। तलवार चलाने में उसे कमाल हासिल था, कारण कि वह एक महान योद्धा था। वह सबसे अधिक साहसी था और ऐसा बेजोड़ शिकारी कि जिसका निशाना कभी चूके ही नहीं। बर्छी पर उसका हाथ इतना संधा था कि क्या मजाल जो इधर-से-उधर हो जाय! भुजाओं में वज्र के समान बल था। आकृति गंभीर और आँखें किसी की भी भृकुटि के आगे न झुकनेवाली। क्रोध में कभी उसने मुट्ठी ऊंची नहीं की और न आवेश में कभी उसकी आवाज ही तेज हुई। चूँकि वह स्वयं अपने स्वामी का स्वामिभक्त सेवक था, इसलिए उसके दास भी उसकी आदरपूर्वक सेवा करते थे।

इसका एक कारण यह भी था कि उस भूमि पर वास करनेवाले समस्त निवासियों में न्याय की दृष्टि से विराट का स्थान बहुत ऊंचा था। भले लोग जब उसके घर के आगे से निकलते तो श्रद्धा से सिर झुका देते और बच्चों की निगाह ज्योंही उस पर जाती कि उसकी चमकीली आँखें देखकर वे मुस्करा उठते।

लेकिन एक दिन की बात कि उसके स्वामी पर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा। महाराज की पत्नी का भाई, जो आधे राज्य का क्षत्रप (वाइसराय) था, समूचे राज्य को हड़प लेने के लिए लालायित हो उठा और दुबका-चोरी भेंट देकर उसने अपना स्वप्न पूरा करने के लिए राज्य के सर्वोत्तम योद्धाओं को अपनी ओर फांस लिया। पुजारियों को भी इस बात पर राजी कर लिया कि अंधेरा होते ही जलाशय में से उन राजहंसों को लावें, जो हजारों वर्षों से वीरवाघवासियों के लिए राजत्व के चिह्न रहे थे। अपने हाथियों को उसने मैदान में इकट्ठा किया और असंतुष्ट पहाड़ी-निवासियों को बुलाकर सबके साथ राजधानी की ओर कूच कर दिया।

राजाज्ञा से सवेरे से लेकर संध्या तक पीतल की झांझें बजती रहीं और बाजों की ध्वनि होती रही। रात को मीनारों पर आग जलाकर और उसमें मसाला डालकर खतरे के संकेत के रूप में पीली रोशनी की गई, लेकिन बहुत थोड़े लोग आये। बात यह थी कि राजहंसों की चोरी का समाचार चारों ओर फैल गया था, जिसे सुनकर सरदारों के दिल भीतर बैठे जा रहे थे। सेनापति और हाथियों के अफ़सर, जोकि महाराज के योद्धाओं में बड़े ही विश्वसनीय माने जाते थे, दुश्मन से जा मिले थे। बेचारे महाराजा ने मित्रों की सहायता के लिए इधर-उधर बहुतेरी निगाह दौड़ाई, लेकिन निष्फल। असल में बात

यह थी कि वह बहुत कठोर स्वामी रहा था। दण्ड देने को सदैव उद्यत और सामंती कर वसूल करने में बहुत ही सख्त। महल में तैनाती पर कोई भी भरोसे का सरदार नहीं रहा था और वहाँ गुलामों और छोटे-मोटे नौकरों की बेवस भीड़ ही दिखाई देती थी।

इस संकट की घड़ी में महाराजा का ध्यान विराट की ओर गया, जिसने उनकी भक्तिपूर्वक सेवा करने की शपथ ली थी। आबनूस की पालकी में सवार होकर महाराजा उस स्वामिभक्त सेवक के घर की ओर रवाना हुए। ज्योंही वह पालकी से उतरे, विराट ने प्रणाम किया; लेकिन महाराजा ने जब उससे सेना का नेतृत्व कर दुश्मन के खिलाफ सेना का संचालन करने का अनुरोध किया तो उनकी आकृति ऐसी हो उठी, मानो वह विराट के सामने एक याचक के रूप में उपस्थित हुए हों। विराट ने श्रद्धा से नत होकर कहा, "स्वामी, मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा और जबतक विद्रोह की अग्नि को शांत नहीं कर दूँगा, इस छत के नीचे वापस कदम नहीं रखूँगा।"

अनंतर उसने अपने बेटों, सम्बन्धियों और गुलामों को इकट्ठा किया और उन्हें साथ लेकर बचे-खुचे राजभक्तों के साथ मिलकर आक्रमण के लिए अपनी फौज को तैयार किया। उसकी सेना ने जंगल में होकर कूच किया और शाम होते-होते वे उस नदी के किनारे आये, जिसके दूसरी ओर अनगिनत संख्या में दुश्मन डेरा डाले पड़ा था। विद्रोहियों को अपनी ताकत का पूरा भरोसा था और वे नदी का पुल बनाने के लिए पेड़ काट-काटकर गिरा रहे थे। इसी पुल से अगले दिन सवेरे वे नदी पार करने और उस ओर की भूमि को खून में डुबो देने की आशा कर रहे थे। लेकिन एक जानवर का पीछा करते हुए विराट को पुल के स्थान से कुछ ऊपर एक घाट का पता लग गया

था । आधी रात के समय उसने अपने आदमियों को उसी घाट से नदी पार कराई और दुश्मन को अचानक जा घेरा । जलती मशालें लेकर वफ़ादार सैनिकों ने हाथियों को आतंकित कर दिया, जिससे वे इधर-उधर दौड़ने लगे और सुप्तावस्था में पड़े दुश्मनों के गिरोह में अव्यवस्था फैल गई । विराट पहला व्यक्ति था, जो राज्य को हड़प करने की इच्छा रखनेवाले विद्रोही के डेरे में पहुंचा और सोनेवाले पूरी तरह से जागें, इससे पहले ही उनमें से दो को तलवार से उड़ा दिया और फिर तीसरा ज्योंही अपना हथियार लेने आगे बढ़ा कि उसका भी काम तमाम कर दिया । चौथे और पांचवें से अंधेरे में ही उसकी भिड़ंत होगई । उनमें से एक को तो उसने सिर पर वार करके काट गिराया और दूसरे की छाती में बर्छी भोंककर मौत के घाट उतार दिया । ज्योंही वे सब प्राणहीन होकर एक-दूसरे के सहारें गिरे, विराट खेमे के द्वार पर जा खड़ा हुआ, ताकि कोई भीतर आकर राजत्व के पावन प्रतीक उन श्वेत राजहंसों को चुरा न ले जाय । लेकिन ऐसा करने कोई आया नहीं, कारण कि दुश्मनों में भगदड़ मची थी और वे हर्षोन्मत्त विजयी सैनिकों के दवाव के मारे मुसीवत में थे । बैरी के पीछा करने का शोर थोड़ी देर में धीमा पड़ गया । तव विराट तलवार हाथ में लिये डेरे के सामने बैठ गया और संगी-साथी सैनिकों के लौटने की वाट जोहने लगा ।

कुछ देर में वनों के पीछे मंगल दिवस का उदय हुआ । वाल-रवि के प्रकाश में ताड़-वृक्ष स्वर्णिम हो उठे और नदी के जल में उनका प्रतिबिम्ब ऐसा प्रतीत होने लगा, मानो वे लाल-लाल जलती मशालें हों । सूर्य एकदम लाल था, जैसे पूर्व दिशा के वक्ष पर कोई भयंकर घाव हो । विराट उठा । अपने कपड़े एक ओर रखे और जलधारा की तरफ बढ़ा । सूर्य भगवान के समक्ष प्रार्थना के रूप में सिर झुकाकर वह नित्य-कर्म के लिए

पानी में घुसा और अपने हाथों से रक्त को धोकर साफ किया। इसके बाद प्रभात के धवल प्रकाश में वह किनारे लौटा और कपड़े पहनकर डेरे की तरफ देखने चला कि रात में उसने क्या-क्या कर डाला। शव पड़े थे। उनकी आंखें खुली थीं और चेहरे डर से बिगड़ गये थे। राजद्रोही का सिर कटा पड़ा था और साथ ही छाती में तलवार झुकने से उस व्यक्ति का भी काम तमाम हो गया था, जो वीरवाघ राज्य के प्रधान सेनापति के पद पर रहा था।

विराट ने उनकी आंखें बन्द कर दीं और उन मृतकों को देखने आगे बढ़ा, जिन्हें उसने सोते में ही मार डाला था। वस्त्रों में अधलिपटे उनके शरीर पड़े थे। उनमें दो तो ऐसे थे, जिन्हें विराट पहचानता नहीं था। वे विद्रोही के गुलाम थे। दक्षिणवासी थे। उनके ऊन जैसे बाल थे और चेहरे काले। लेकिन ज्योंही विराट की निगाह अंतिम शव पर गई, उसकी आंखें धुंधली हो आईं। उसने देखा कि उसके बड़े भाई बेलंगर का चेहरा उसके सामने है। वह पहाड़ी प्रदेशों का राजा था और राजद्रोही की सहायता के लिए आया था। विराट ने अनजाने उसे मार गिराया था।

कांपता-कांपता वह झुका कि देखे कि कहीं उसमें स्पंदन शेष है या नहीं, लेकिन उसके हृदय की गति तो सदैव के लिए पहले ही थम चुकी थी। मृतक की काली-काली चमकीली आँखें उसकी ओर ऐसे ताकती थीं, मानो विराट की आत्मा को बेध डालेंगी। विराट मुश्किल से सांस ले सका और वहीं मृतकों के बीच बैठ गया। उसे लगा, जैसे वह भी उन्हीं में से एक मुर्दा है। उसने अपनी आँखें अपने मां-जाये भाई की निगाह पर से हटा लीं, जो उसे अपराधी ठहरा रही थीं।

इसके बाद शीघ्र ही बाहर आवाजें सुनाई देने लगीं।

सिपाही डेरे को लौट रहे थे। उनके हृदय में ग्रानन्द की लहरें हिलोरें ले रही थीं ग्रौर लूट-पाट के धन से सम्पन्न होकर वे चिड़ियों की भाँति हर्षोन्मत्त हो चहचहा रहे थे। यह देखकर कि राज्य में विद्रोह की ग्रग्नि प्रज्वलित करने वाला ग्रौर उसके संगी-साथी मारे गये हैं ग्रौर यह जानकर कि पवित्र राजहंस सुरक्षित हैं, वे खुशी से उछलने ग्रौर नाचने लगे। उल्लास में भरकर वे विराट की पोशाक चूमते थे ग्रौर चिल्लाते थे कि तलवार चलाने में वह एक ही है ग्रौर धन्य है! जव ग्रधिकांश सिपाही लौट ग्राये तो उन्होंने ग्रपनी लूट का सामान गाड़ियों पर लादा। बोझ के मारे गाड़ियों के पहिये जमीन में इतने धंस गये कि खींचने के लिए भैंसों को ग्रार लगानी पड़ी ग्रौर उनके भार से नावों के डूब जाने का खतरा दीखने लगा। एक संदेश-वाहक जलधारा को पार करके तेजी से महाराजा के पास समाचार लेकर चला। शेष सब सामान के साथ रह गये ग्रौर विजय पर खुशियां मनाने लगे।

इस बीच विराट खामोश बैठा था, मानो सपना देख रहा हो। केवल एक बार उसने मुंह से ग्रावाज निकाली, जबकि सिपाही मृतकों के शरीर से कपड़े उतारने लगे। विराट उठ खड़ा हुग्रा ग्रौर उसने ग्रादेश दिया कि शवों के दाह के लिए चिताएं तैयार की जायं। नौकर-चाकर ग्राश्चर्यचकित थे कि वह उन षड्यंत्रकारियों के साथ ऐसी दयालुता का वर्ताव क्यों कर रहा है, जिनकी बोटी-बोटी गीदड़ों से नुचवा डालनी चाहिए थी। लेकिन फिर भी जो ग्राज्ञा उन्हें मिली, उन्होंने उसका पालन किया। चिताएं जब तैयार हो गईं तो स्वयं विराट ने उनमें ग्राग लगाई ग्रौर लपटों में सामग्री तथा चंदन की ग्राहुति दी। तत्पश्चात् वह मुंह फेरकर चुपचाप खड़ा हो गया ग्रौर उस समय तक खड़ा रहा, जबतक कि जलती चिताएं गिरने तथा चमकती

राख जमीन पर बिखरने न लगी।

इस बीच नौकर-चाकरों ने वह पुल तैयार कर डाला, जिसे ज़ोम में आकर एक दिन पहले दुश्मन के आदमियों ने बनाना प्रारम्भ किया था। केले के पत्तों का मुकुट पहने सबसे पहले योद्धाओं ने पुल पार किया, फिर गुलामों ने और उसके बाद अश्वारोही सरदारों ने। विराट ने अधिकांश योद्धाओं को पहले ही रवाना कर दिया, क्योंकि उनका शोर और संगीत उसकी मनःस्थिति से मेल नहीं खाता था। पुल के बीच में रुककर उसने प्रवाहित धारा को दाएं-बाएं देखा। जो सिपाही उसके आगे पुल पार कर चुके थे और जो पार करने को थे और जो सेनापति की आज्ञा से पीछे चल रहे थे, सब-के-सब आश्चर्य करने लगे। उन्होंने देखा कि विराट ने अपनी तलवार ऊंची की, मानो स्वर्ग को भयभीत करना चाहता हो, लेकिन जब उसकी बांह नीची हुई तो उसकी उंगलियाँ ढीली पड़ गईं, तलवार हाथ से छूटकर नदी की धारा में गिरी और पानी में विलीन हो गई। दोनों किनारों पर खड़े नंगे लड़के पानी में कूद पड़े। उनका अनुमान था कि तलवार अचानक गिर गई है और गोता लगाकर वे उसे निकाल लाना चाहते थे, लेकिन विराट ने उन्हें रोक दिया और आगे बढ़ चला। उसके दोनों ओर आश्चर्य-चकित नौकर-चाकर थे। विराट बहुत ही पीड़ित था। घर तक का लम्बा रास्ता पार करते समय एक शब्द भी उसके होठों से नहीं निकला।

वीरवाघ के सुसज्जित द्वार और ऊंची-ऊंची मीनारें अब भी काफी दूरी पर थीं, जबकि एक सफेद धूल का बादल आगे बढ़ता हुआ दिखाई दिया। धूल को चीरकर अग्रदूत और अश्वारोही चले आ रहे थे। सेना को देखते ही वे रुक गये और सड़क पर उन्होंने कालीन बिछा दिये। यह इस बात का सूचक था

कि महाराजा का आगमन हो रहा है। महाराजा के चरण जन्म दिवस से लेकर मृत्यु समय तक सामान्य भूमि का स्पर्श नहीं कर सकते थे। अब महाराजा सामने दिखाई देने लगे। वह हाथी पर सवार थे और उनके चारों ओर नवयुवकों की टोली थी।

आगे आकर उनका आज्ञाकारी हाथी झुका और महाराजा उतरकर कालीन पर आ खड़े हुए। विराट ने चाहा कि अपने स्वामी को झुककर प्रणाम करे, लेकिन उससे पहले ही महाराजा उसे आलिंगन में वांधने के लिए तेजी से आगे बढ़ आये। वह एक ऐसा सम्मान था, जो किसी भी सेवक को प्राप्त नहीं हुआ था। विराट ने राजहंस मंगाये। जव उन हंसों ने अपने श्वेत पंख फड़फड़ाये तो इतने जोर से हर्षध्वनि हुई कि उससे घोड़े चौंककर दो पैरों पर खड़े हो गये और महावतों के लिए हाथियों पर नियंत्रण रखना कठिन हो गया। विजय के इन चिह्नों के बीच महाराजा ने एक बार पुनः विराट का आलिंगन किया और उस सेवक को बुलाया, जोकि राजपूतों के प्रारंभिक सूरमा की तलवार लिये उनके साथ था। सात सौ वर्ष से यह अस्त्र महाराजाओं के खजाने में सुरक्षित रहा था। उसकी मूठ जवाहरातों से जगमगाती थी और उसकी धार पर सुनहरे अक्षरों में विजय के मंगलसूत्र खुदे थे। लिखावट प्राचीन थी और उसे संत तथा पुजारी लोग ही पढ़ सकते थे। महाराजा ने तलवारों में श्रेष्ठ उस तलवार को आभार के रूप में तथा यह प्रदर्शन करने के हेतु कि आगे से वह उनके योद्धाओं का सरदार और फौजों का नायक होगा, विराट को भेंट किया।

लेकिन विराट ने सिर झुकाकर कहा, "महाराज, आप अत्यंत दयालु और कृपालु हैं। क्या मैं एक प्रार्थना कर सकता हूं ?"

प्रार्थी को नतमस्तक देख महाराजा बोले, "तुम्हारी प्रार्थना

तुम्हारी निगाह उठाकर मेरी ओर देखने से पहले ही स्वीकार है। माँगते ही मेरा आधा राज्य तुम्हारा।"

इसपर विराट ने कहा, "तो महाराज, आज्ञा दीजिये कि यह तलवार खजाने को वापस भेज दी जाय, क्योंकि मैंने प्रतिज्ञा कर ली है कि आयंदा कभी भी तलवार नहीं चलाऊंगा। अपने भाई की मैंने हत्या कर डाली है। मुझे छोड़ एकमात्र वही तो था, जिसे मेरी मां ने अपने गर्भ में धारण किया था और जिसका मां ने मेरे साथ ही लालन-पालन किया था!"

आश्चर्य से महाराज ने विराट की ओर देखा। फिर उत्तर दिया, "ऐसी हालत में तुम बिना तलवार के ही मेरी सेना के नायक हो जाओ, जिससे मुझे यह पता रहे कि मेरा राज्य दुश्मनों से सुरक्षित है, क्योंकि आजतक कभी भी इतने दुश्मनों के विरुद्ध किसी भी वहादुर व्यक्ति ने सेना का इस कदर बुद्धि-मानी के साथ संचालन नहीं किया। मेरी इस तलवार को ले लो। वह सत्ता का चिह्न है। मेरा यह घोड़ा भी लो, जिससे सब लोगों को मालूम हो जाय कि तुम मेरे योद्धाओं के सरदार हो।"

लेकिन विराट ने विनयपूर्वक पुनः निवेदन किया, "महा-राज, एक अदृश्य शक्ति ने मुझे संकेत किया है, जो मेरे हृदय में घर कर गयी है। अपने भाई का मैंने हनन कर दिया। इससे मुझे सीख मिली है कि जो दूसरे को मारता है, वह अपने भाई की ही हत्या करता है। मैं युद्ध में सेना का नेतृत्व नहीं कर सकता, क्योंकि तलवार बल का प्रतीक है और बल सत्य का दुश्मन है। जो कोई हत्या के पाप में भाग लेता है, वह स्वयं हत्यारा है। मेरी इच्छा यह नहीं है कि मैं दूसरों में भय उत्पन्न करूँ। मैं भीख माँगकर रोटी खा लेना पसंद करूँगा, वजाय इसके कि मैं उस सम्मान से इंकार करूं, जो मुझे प्रदान किया

गया है। दुनिया का घटना-चक्र तेजी से विना रुके चल रहा है और उसके वीच हमारा जीवन बहुत थोड़ा है। अब मैं चाहता हूं कि मेरे शेष दिन विना और बुराई किये व्यतीत हों।"

यह सुनकर थोड़ी देर के लिए महाराजा का चेहरा फ़क पड़ गया और अबतक जो खुशी उसपर खेल रही थी, उसकी जगह भयातुर निस्तब्धता छा गई। बाबा-परबाबा के जमाने से लेकर आज तक कभी भी ऐसा न हुआ था कि किसी सरदार ने लड़ाई को इस प्रकार तिलांजलि दे दी हो अथवा किसी सरदार ने महाराजा की भेंट को यों ठुकरा दिया हो। लेकिन महाराजा की निगाह फिर उन पवित्र राजहंसों पर गई, जिन्हें विराट राजद्रोहियों से छीन लाया था। विजय के इन चिह्नों को देख कर महाराजा का चेहरा चमक उठा और उन्होंने कहा, "मैंने तुम्हें हमेशा दुश्मनों के साथ लड़ने में बहादुर पाया है। राज्य के नौकरों में ईमानदार व्यक्ति के रूप में तुम अपना सानी नहीं रखते। यदि युद्ध में मुझे तुम्हारी सेवाओं से वंचित होना ही पड़े तो किसी दूसरे क्षेत्र में मैं तुम्हारी सेवाओं से वंचित नहीं रह सकता। तुम ईमानदार हो, बुराई को पहचानते हो और उसका उन्मूलन कर सकते हो, इसलिए तुम मेरे न्यायाधीशों में सबसे ऊँचे न्यायाधीश होगे और मेरे महल मे न्याय का निर्णय किया करोगे, जिससे कि मेरी चहारदीवारी के भीतर सत्य का प्रसार हो और समूची भूमि में सचाई का पालन हो।"

विराट ने श्रद्धा से सिर झुका दिया। महाराजा ने उसे राजहाथी पर सवार होने का आदेश दिया। फिर वे साथ-साथ साठ मीनारोंवाले उस नगर में प्रविष्ट हुए। उस समय ऐसी हर्षध्वनि हो रही थी, मानो तूफानी सागर में जोर की लहरें उठकर गर्जन कर रही हों।

२/

अब से आगे प्रभात से लेकर सूर्यास्त तक राज-प्रासाद की छत्र छाया में अपने आसन से विराट महाराजा के नाम पर न्याय का निर्णय करने लगा। उसके फैसले उस तुला की भाँति होते थे, जिसकी कमानी इधर या उधर झुकने के पूर्व देर तक कंपकंपाती है। उसकी चमकीली आँखें गहराई के साथ अभियुक्त की आत्मा को टटोलती थीं और उसके प्रश्न अपराध की तह को ऐसे कुरेदते थे जैसे कि बिज्जू अंधकारपूर्ण भू-गर्भ में अपना घर बनाने के लिए मिट्टी को कुरेदता है।

उसका दण्ड कठोर होता था; लेकिन मुकदमे की सुनवाई के दिन ही वह अपना फैसला कदापि न देता था। न्याय की घोषणा करने से पहले एक रात का अंतर वह हमेशा डाल लेता था। सूर्योदय के पूर्व घंटों उस मामले के पक्ष-विपक्ष में सोचता हुआ वह घर की छत पर इधर-से-उधर टहलता था, उसकी पग-ध्वनि उसके कुटुम्बीजनों को सुनाई पड़ती थी। फैसला देने से पहले वह अपना हाथ और मुंह पानी से धो डालता था, जिससे कि उसका निर्णय भावावेश से मुक्त रहे। फैसला दे चुकने के बाद वह हमेशा अपराधी से पूछता था, "कहो भाई, मेरे निर्णय से तुम्हें कोई शिकायत तो नहीं है?" उत्तर में शायद ही कभी किसी ने आपत्ति की हो। अपराधी चुपचाप न्यायालय की सीढ़ी का चुम्बन कर, नतमस्तक हो, दण्ड को ऐसे स्वीकार कर लेता था, मानो वह ईश्वर-प्रदत्त निर्णय हो।

विराट ने मृत्यु का दण्ड कभी किसी को नहीं दिया, अपराध कितना ही जघन्य क्यों न हो और मृत्यु का दण्ड देने के लिए चाहे जितने प्रमाण क्यों न हों। अपने हाथों को रक्त-रंजित करने से वह डरता था। राजपूतों के प्राचीन निर्झर का वह पात्र, जिसके ऊपर, वार करने से पहले, जल्लाद अपराधी से झुकने के लिए कहता था और जिसके पत्थर खून के मारे काले पड़ गये थे, विराट की जजी के वर्षों में सफेद निकल आया। फिर भी उस भूमि पर अपराध-वृत्ति में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं हुई।

विराट अपराधी को बंदी-गृह में भेज देता था—उस बंदी-गृह में, जो एक चट्टान को काटकर बनाया गया था अथवा उन्हें पहाड़ों पर भेज देता था, जहाँ बगीचों की दीवारों के लिए उन्हें पत्थर खोदने पड़ते थे, या नदी-तट की चावल की मिलों में, जहां उन्हें हाथियों के साथ जुतकर चक्र घुमाने पड़ते थे।

मानव-जीवन को वह सम्मान की दृष्टि से देखता था। लोग उसका आदर करते थे, कारण कि उसका कोई भी निर्णय कभी गलत सिद्ध नहीं होता था और सत्य की खोज करते-करते वह कभी थकता न था। न कभी उसके शब्दों से उसका क्रोध ही प्रदर्शित होता था। दूर-दूर से किसान लोग बैल-गाड़ियों में बैठकर अपने झगड़े सुलझवाने के लिए उसके पास आते थे। पुजारी उसकी सम्मति को शिरोधार्य करते थे और महाराजा भी उससे सलाह लेते थे। उसकी ख्याति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी और लोग भूल गये कि कभी उन्होंने उसकी तलवार चलाने की निपुणता की भी प्रशंसा की थी। समूचे राजपूताने में अब वह न्याय के स्रोत के रूप में प्रसिद्ध हो गया।

विराट की जजी के छठे वर्ष में एक बार ऐसा हुआ कि कुछ लोग कज्ज़ार जाति के एक युवक को पकड़ कर लाये। कज्ज़ार

लोग पहाड़ियों के उस ओर रहते थे और दूसरे ही देवी-देवताओं की मानता करते थे। युवक के पैर लहूलुहान हो रहे थे, क्योंकि वे लोग उसे कई दिन तक लम्बा सफर कराकर लाये थे। उसकी हृष्ट-पुष्ट भुजाएं कसकर बाँध रखी थीं, जिससे वह उन्हें चला-कर कोई हानि न पहुंचा दे, जिसकी संभावना उसकी भयंकर और चिड़चिड़ी आँखों से साफ दिखाई देती थी। न्यायाधीश के आसन के निकट लाकर उन्होंने बंदी को विराट के सामने घुटनों के बल बैठने के लिए बाध्य किया और फिर स्वयं साष्टांग प्रणाम करके प्रार्थना करने के लिए हाथ जोड़कर खड़े हो गये।

न्यायाधीश ने उत्सुकतापूर्ण दृष्टि से उन अजनवियों की ओर देखा और पूछा, "भाइयो, तुम कौन हो, जो इतनी दूर से चलकर मेरे पास आये हो ? और यह आदमी कौन है, जिसे तुमने इस प्रकार जकड़ रखा है ?"

उनमें जो सबसे बड़े थे, उन्होंने हाथ जोड़कर उत्तर दिया, "भगवन, हम लोग गड़रिये हैं। पूर्वी इलाके में रहते हैं। जिसे हम लोग आपके पास लाये हैं, वह बड़ा ही पापी है। इस दुष्ट ने इतने आदमियों की हत्या कर डाली है, जितनी कि उसके हाथों में उंगलियां भी नहीं हैं। हमारे गाँव के एक आदमी से इसने कहा कि अपनी लड़की का ब्याह मेरे साथ कर दो; लेकिन उसने इन्कार कर दिया, कारण कि इसकी जाति के रीति-रिवाज घृणित हैं। ये लोग कुत्तों को खा जाते हैं और गायों की हत्या कर डालते हैं। इनके साथ विवाह न करके उस आदमी ने अपनी लड़की तराई प्रदेश के एक सौदागर को ब्याह दी। इस पर गुस्से में भरकर यह कमवख्त हमारे बहुत-से ढोरों को हांक ले गया और एक रात आकर इसने लड़की के बाप और तीन भाइयों को मार डाला। जब कभी उस घर का कोई आदमी पहाड़ी पर ढोर चराने गया कि इसने उसकी हत्या कर डाली।

इस तरह हमारे गाँव के ग्यारह आदमियों का इसने खून कर दिया। आखिर हम लोगों ने इकट्ठे होकर इसका पीछा किया और बड़ी मुश्किल से इसे पकड़ पाया। न्यायदाता, अब हम इसे आपके पास लाये हैं कि आप इस हत्यारे से हमारे गाँव का पीछा छुड़ा दें।"

विराट ने सिर उठाया और बंधनों में जकड़े उस व्यक्ति की ओर देखकर पूछा, "क्यों भाई, तुम्हारे बारे में ये लोग जो कहते हैं, सच है ?"

"तुम कौन हो ? महाराजा हो ?"

"मैं विराट हूं। महाराजा का अनुचर और न्याय का सेवक। मैं चाहता हूं कि अपनी गलतियों का प्रायश्चित्त कर लूँ और सच को झूठ से अलग कर दूँ।"

अभियुक्त क्षणभर मौन रहा। अनन्तर तीक्ष्ण दृष्टि से उसने विराट की ओर देखा। फिर बोला, "न्याय के इतने ऊंचे आसन पर बैठकर तुम कैसे जान सकते हो कि सच क्या है और झूठ क्या है ? तुम्हारी जानकारी तो उसी से होती है न, जो लोग तुमसे आकर कहते हैं ?"

विराट ने कहा, "इन लोगों के अभियोग के विरुद्ध तुम्हें जो कुछ कहना हो, कहो, जिससे दोनों पक्षों की बात सुनकर मुझे मालूम हो सके कि सचाई क्या है ?"

बंदी की भौंहें घृणा से तन गईं।

"मुझे इन लोगों से क्या झगड़ना ! तुम कैसे जान सकते हो कि मैंने क्या किया ? मैं स्वयं नहीं जानता कि गुस्सा चढ़ता है तो मेरे हाथ क्या कर बैठते हैं ? उस आदमी के साथ मैंने न्याय ही किया, जिसने एक औरत रुपये के मोल बेच दी और उसके बाल-बच्चों और नौकर-चाकरों के साथ भी मैंने न्याय

ही किया। ये लोग चाहते हैं तो मेरे ऊपर आरोप लगावें, मैं तो इन्हें घृणा की दृष्टि से देखता हूं और तुम्हारे फैसले को भी।"

आरोपियों ने देखा कि बंदी इतने न्यायनिष्ठ जज के प्रति अवमानना प्रकट कर रहा है तो उनमें क्रोध का तूफान उठ खड़ा हुआ। पेशकार ने उसे मारने के लिए अपना कोड़ा उठाया। विराट ने उन सबको शांत रहने का इशारा किया और फिर प्रश्न पूछने लगा। आरोपी जब-जब आरोप लगाते थे, विराट बंदी से उसका उत्तर देने के लिए कहता था। लेकिन अभियुक्त क्रोध में दांत पीसता था, केवल एक बार उसने मुंह खोला। बोला, "दूसरों के शब्दों से सचाई तुम जान कैसे सकते हो?"

मध्याह्न का सूर्य ठीक सिर पर आ चुका, तब मुकदमे की सुनवाई खत्म हुई। फिर उठते हुए, जैसीकि उनकी आदत थी, विराट ने कहा, "अब मैं घर जा रहा हूं और फैसला कल सुनाऊंगा।"

आरोपियों ने विनय की, "स्वामी, तुम्हारी दया के लिए हम लोग सात दिन का सफर करके आये हैं और घर लौटने में सात दिन फिर लगेंगे। हम कल तक कैसे रुकें? हमारे ढोर-डंगर प्यासे होंगे और हमारी जमीन की जुताई होनी है। हमारी प्रार्थना है कि आप अपना फैसला अभी सुना दें।"

विराट फिर बैठ गया और क्षण भर के लिए विचार-मग्न हो गया। उसकी भौंहें उस व्यक्ति की भाँति झुक आईं, जिसके सिर पर भारी बोझा हो। अबतक कभी भी उसे ऐसे व्यक्ति को, जिसने क्षमा की याचना न की हो अथवा उसे जो उद्धत बना रहा हो, दण्डित करने के लिए बाध्य नहीं होना पड़ा था। वह बहुत देर तक विचारों में डूबा रहा और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, उसकी चिंता भी बढ़ती गई। तब वह उठकर

झरने पर गया और ठण्डे पानी में हाथ-मुंह धोये, ताकि उसके शब्द आवेशमुक्त रहें। फिर अपने स्थान पर आसीन होकर उसने कहा :

"परमात्मा करे, मेरा फैसला न्यायपूर्ण हो ! इस अभियुक्त के सिर पर, जिसने ग्यारह जीवित आत्माओं का हनन किया है, भयंकर पाप चढ़ा है। लगभग एक वर्ष तक आदमी का जीवन मां की कोख में अदृश्य रूप से पोषित होता है। इस कारण उन व्यक्तियों में से हरेक के लिए, जिन्हें इसने मार डाला है, एक वर्ष तक भू-गर्भ के अंधियारे में इसे छिपकर रहना होगा। और चूँकि इसके हाथों ग्यारह आदमियों का खून हुआ है, अतः हर वर्ष ग्यारह बार इसके सौ-सौ कोड़े लगेंगे, जिससे हत्या किये व्यक्तियों की संख्या के अनुसार यह पाप का प्रायश्चित्त कर सके। लेकिन इसके जीवन से इसे वंचित नहीं किया जायगा। जीवन तो परमात्मा की देन है और आदमी को भगवान की चीजों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। ईश्वर करे, मेरा यह निर्णय, जिसे मैंने किसी व्यक्ति की आज्ञानुसार नहीं, बल्कि अपराध के प्रतिकार के लिए घोषित किया है, न्यायपूर्ण हो !"

घोषणा होते ही वादियों ने आदरपूर्वक उसके आसन का चुंबन किया, लेकिन बंदी ने खामोशी ही रखी। विराट ने उससे कहा, "देखो, मैंने तुमसे सफाई देने के लिए कहा था, जिससे हल्की सजा देने के लिए मुझे कारण मिल जाय और अपने आरोपियों के विरुद्ध तुम मुझे कुछ सहायता दे सको; लेकिन तुम्हारे होंठ तो जैसे चिपक गये थे। अगर मेरे निर्णय में कहीं कोई त्रुटि रह गई हो, तो परमात्मा के सामने उसके लिए तुम मुझे दोषी न ठहराकर अपने मौन को ही दोष देना। मुझे तो इस बात की खुशी है कि मैं तुम्हारे प्रति दयावान रहा हूं।"

बंदी ने उत्तर दिया, "मुझे तुम्हारी दया नहीं चाहिए। एक क्षण में जो जीवन तुम छीन रहे हो, उसकी तुलना में तुम मुझे दया दे भी क्या सकते हो?"

"मैं तुम्हारा जीवन कहाँ छीन रहा हूं?"

"नहीं, तुम मुझसे मेरा जीवन ही छीन रहे हो और मेरे कबीले के सरदारों की अपेक्षा, जिन्हें तराई भूमि के लोग 'जंगली' कहते हैं, कहीं अधिक निर्दयता के साथ छीन रहे हो। तुम मुझे मार क्यों नहीं डालते? मैंने तो आदमियों को आदमी की तरह मारा; लेकिन तुम तो मुझे मुर्दे की तरह अंधेरी जमीन में गाड़ दे रहे हो, जहां पड़ा-पड़ा मैं सड़ता रहूं। और ऐसा तुम कर क्यों रहे हो? इसलिए कि तुम्हारा कायर हृदय रक्त-पात करने से डरता है और इसलिए कि तुम्हारी आत्मा दुर्बल है। तुम्हारा कानून कपट है और तुम्हारे फैसले से लोगों का बलिदान होता है। तुम मेरी हत्या कर डालो, क्योंकि मैंने भी तो हत्या की है।"

"मैंने तुम्हें ठीक ही सजा दी है।"

"ठीक ही! लेकिन न्यायदाता, वह कौन-सी तराजू है, जिससे तुम ठीक तौलते हो। किसने तुममें कोड़े लगाये हैं कि तुम जान सको कि कोड़े की मार क्या होती है? अपनी अंगु-लियों पर तुम वर्षों की गिनती ऐसे गिन डालते हो, मानो दिन के उजियाले में व्यतीत हुए वर्ष में और अंधेरी धरती के भीतर कारावास में विताये वर्ष में कोई अंतर ही न हो? तुमने जेल-खाना काटा है, जो जान सको कि मेरे जीवन के कितने वसंत तुम छीन रहे हो? तुम अज्ञानी हो और तुममें ईमानदारी भी नहीं है, कारण कि जो चोट खाता है, वही जान सकता है कि चोट क्या होती है। जो चोट करता है, वह उसके कष्ट को क्या जान सकता है? जिसके बिवाई फटती है, वही उसकी पीर का

अनुभव करता है। घमंड में भरकर तुम मानते हो कि तुमने अपराधी को दण्डित कर दिया, लेकिन तुम सबसे भयंकर अपराधी हो, क्योंकि जब मैंने हत्या की थी, मैं क्रोध से पागल हो रहा था, आवेश की गुलामी में जकड़ा था; लेकिन तुम तो ठण्डे दिमाग से मेरी जान ले रहे हो, जिसकी कठोरता का अनुमान तुम्हारे हाथ नहीं कर सकते और जिसका परिणाम तुमने स्वयं कभी नहीं भुगता। रसातल में जाओ, उससे पहले ही तुम न्याय के आसन से नीचे उतर आओ। जो संयोग के आधार पर चीजों का निर्णय करता है, वह बड़ा अधम है और वह अज्ञानी भी बड़ा दुष्ट है, जो सोचता है कि वह जानता है कि न्याय क्या है। ओ अज्ञानी जज ! न्याय की कुर्सी से नीचे उतर आओ और जीवित व्यक्तियों को मौत की सजा का फैसला मत दो !"

क्रोध से बंदी पीला पड़ गया। क्रुद्ध दर्शकगण फिर उस पर टूट पड़ने को हुए। विराट ने उन्हें रोक दिया और बंदी की ओर मुंह करके उसने धीरे-से कहा, "जो फैसला मैं दे चुका हूं, उसे रद्द करना अब मेरे बस की बात नहीं है। मुझे विश्वास है कि मेरा फैसला ठीक है।"

विराट जाने के लिए उठा। आदमियों ने कैदी को पकड़ लिया। बंधनों से जकड़ा वह संघर्ष कर रहा था, लेकिन कुछ कदम चलकर विराट रुका और उसने उस अपराधी पर एक निगाह डाली। वह बड़े ही दृढ़ और क्रुद्ध नेत्रों से विराट की ओर ताक रहा था। विराट कांप उठा। उसे लगा, वे आँखें ठीक वैसी ही हैं, जैसीकि उसके दिवंगत भाई की थीं, जिसकी हत्या अपने हाथ उसने कर डाली थी और जिसे राज-द्रोही के तंबू में उसने मरा हुआ पाया था।

●

उस संध्या को विराट ने किसी से एक शब्द भी नहीं कहा। उस अजनबी की निगाह ने अग्निबाण की भाँति उसकी आत्मा को बेध डाला था। सारी रात उसे नींद नहीं आई और घरवाले ताड़वृक्षों के पीछे प्रभात की अरुणिमा फैलने तक सारी रात घर की छत पर उसके इधर-उधर घूमने की आवाज सुनते रहे।

सूर्योदय होने पर विराट ने मंदिर के तालाब में नित्य-कर्म से छुट्टी पाई। फिर पूर्व की ओर मुंह करके उसने प्रार्थना की। अनंतर घर लौटकर पीले रेशम की विशिष्ट पोशाक पहनी। इसके बाद कुटुंवी-जनों का उसने अभिवादन किया। इस शिष्टाचार से वे लोग आश्चर्यचकित हो गये; लेकिन उन्हें कुछ पूछने का साहस न हुआ। फिर विराट अकेला राजा के महल की ओर चल दिया, जहां दिन और रात में किसी भी घड़ी जाने की उसे छूट थी। वहाँ पहुंचकर महाराजा के आगे नतमस्तक होकर विराट ने महाराजा की पोशाक के छोर का स्पर्श किया, जो इस बात का सूचक था कि वह कुछ याचना करना चाहता है।

स्नेह-पूर्वक महाराजा ने उसको ओर देखकर कहा, "तुमने इच्छापूर्वक मेरी पोशाक का स्पर्श किया है। माँग करने से पहले ही मैं तुम्हारी इच्छा को स्वोकार करता हूं।"

विराट सिर झुकाये खड़ा रहा।

"आपने अपने न्यायाधीशों का मुझे सरताज बनाया है। छः वर्ष तक मैं आपके नाम पर फैसले करता रहा हूं। मुझे पता नहीं कि मैंने ठीक न्याय किया या नहीं। अब आप मुझे एक महीने आराम करने और शांतिपूर्वक रहने की आज्ञा दीजिये, जिससे मैं सत्य के मार्ग की खोज कर सकूं। मुझे यह भी अनुमति दीजिये कि मैं अपनी राय आपसे तथा दूसरों से अलग रख सकूं। मैं अन्याय-रहित कार्य करना चाहता हूं और आपसे अलग होकर रहना चाहता हूं।"

महाराजा अचरज से भर उठे। बोले, "आज से महीने भर तक न्याय की दृष्टि से मेरा राज्य बड़ा दीन हो जायगा, फिर भी मैं तुमसे यह नहीं पूछूँगा कि तुम किस मार्ग का अनुसरण करना चहते हो। परमात्मा करे, तुम उस मार्ग पर चलकर सत्य को प्राप्त कर सको।"

कृतज्ञभाव से राज-सिंहासन का चुंबन करके, सिर झुकाकर, विराट वहाँ से चल दिया।

३/

घर आकर उसने पत्नी और बच्चों को बुलाया। बोला, "एक महीने तक तुम लोग मेरी सूरत नहीं देख सकोगे। मुझे विदाई दो और कुछ भी पूछताछ न करो। जाओ, अपने कमरों में जाकर बंद हो जाओ, जिससे तुममें से कोई भी यह न देख सके कि घर से बाहर मैं किधर जाता हूं। महीना पूरा न हो जाय तबतक तुम मेरे बारे में किसी प्रकार की भी जानकारी की कोशिश मत करना।"

सबने चुपचाप उसके आदेश को शिरोधार्य किया।

तब विराट ने काली पोशाक पहनकर भगवान की मूर्ति के समक्ष प्रार्थना की। अनंतर ताड़पत्र पर एक लंबी चिट्ठी लिखी और उसे मोड़कर रख लिया। रात होते ही सुनसान घर का त्याग कर वह उस विशाल चट्टान पर गया, जिसमें गुफाएं और बंदीगृह थे। वहाँ पहुंचकर उसने द्वार खटखटाया। निद्रामग्न जेलर उठा और उसने पछा, "कौन?"

"मैं हूं विराट, प्रधान न्यायाधीश। मैं उस कैदी को देखने आया हूं, जिसे कल यहाँ लाया गया था।"

"स्वामी, उसकी कोठरी तो नीचे पाताल में है, सबसे नीचे अंधेरे में। क्या मैं आपको वहां ले चलूँ?"

"मैं उस जगह को जानता हूं। मुझे चाबी दे दो और तुम सोने चले जाओ। कल दरवाजे के बाहर तुम्हें चाबी रखी मिल जायगी। देखो, किसी से भी इस बात की चर्चा मत करना

कि आज रात तुमने मुझे यहाँ देखा था।"

जेलर चाबी ले आया और रोशनी के लिए एक बत्ती। विराट के इशारे पर वह लौट गया और जाकर बिस्तरे पर पड़ रहा। विराट ने गुफा का द्वार खोला और तहखाने में प्रविष्ट हुआ। एक शताब्दी पहले राजपूताने के महाराजाओं ने कैदियों को इसी चट्टान की गुफा में बंद करना प्रारंभ किया था। हर रोज बंदियों को पत्थर खोद-खोदकर गुफा को और गहरा करके नई कोठरियां बनानी पड़ती थीं, जिससे अगले दिन आने वाले बंदी वहाँ स्थान पा सकें।

विराट ने एक बार वृत्ताकार आकाश की ओर देखा। टिम-टिमाते तारे दिखाई दे रहे थे। फिर उसने द्वार बंद कर दिया। उसके चारों ओर अंधेरा छा गया। उस अंधियारे में बत्ती का प्रकाश ऐसे फैलता था, जैसे कोई जंगली पशु अपने शिकार पर दौड़ता है। पेड़ों की सरसराहट और बंदरों की 'कें-कें' उसे अब भी सुनाई पड़ रही थी। पहली मंजिल की सीढ़ियाँ उतरकर नीचे पहुंचने पर पेड़ों की सरसराहट इतनी हल्की सुनाई पड़ने लगी, मानो बहुत दूर से आ रही हो। उससे और नीचे गया तो वहाँ घोर निस्तब्धता छाई थी, जैसे वह समुद्र की तह में पहुंच गया हो। सबकुछ शांत और सर्द। पत्थरों में से नमी की गंध आ रही थी। ताजी मिट्टी की सुगंध जरा भी नहीं थी। वह ज्यों-ज्यों भीतर बढ़ता गया, उसके पैरों की चाप उस नीरवता में और भी कर्कश होती गई।

बाहरी सतह से कैदी की कोठरी पांच मंजिल नीची थी, सबसे ऊँचे ताड़वृक्ष की लम्बाई से भी नीची। विराट अंदर गया और उसने बत्ती ऊपर उठाकर अंधेरे में पड़े एक ढेर को देखा, जो पलभर को हिलता-सा जान पड़ा। फिर जंजीर की खड़-खड़ाहट हुई।

पृथ्वी पर पड़ी उस काया के ऊपर झुककर विराट ने कहा, "क्यों भाई, तुम मुझे चीह्नते हो ?"

"क्यों नहीं, तुम वही तो हो, जिसे लोगों ने मेरे भाग्य का स्वामी बना दिया था और जिसने मेरे भाग्य को अपने पैरों तले रौंद डाला था।"

"मैं स्वामी नहीं, महाराजा का और न्याय का चाकर हूं। न्याय का पालन करने के लिए ही मैं यहां आया हूं।"

बंदी ने अविचल और नैराश्यपूर्ण दृष्टि से न्यायाधीश की ओर देखा। बोला, "मुझसे क्या चाहते हो ?"

लम्बी खामोशी के बाद विराट ने कहा, "अपने फैसले से मैंने तुम्हें चोट पहुंचाई और ठीक उसी तरह तुमने अपने कठोर शब्दों से मुझे चोट पहुंचाई है। कह नहीं सकता कि मेरा निर्णय ठीक था; लेकिन तुमने जो कुछ कहा था, उसमें सचाई थी। जिस दण्ड की अनुभूति स्वयं किसी व्यक्ति को नहीं है, उससे उसे दूसरे को दण्डित नहीं करना चाहिए। मैं अबतक अज्ञानी था। अब सीखने के लिए सहर्ष उद्यत हूं। इस अंधियारे में मैंने सैकड़ों को ही भेजा होगा। बहुतों के साथ मैंने ऐसा कठोर व्यवहार किया है कि उसकी कठोरता मैं स्वयं अनुभव नहीं कर सकता। अब मैं यहाँ सचाई की खोज में आया हूं और चाहता हूं कि उसे पा लूँ, जिससे मैं सब प्रकार के पापों से मुक्त हो जाऊँ।"

बंदी खामोश रहा। उसकी जंजीर की हल्की खड़खड़ाहट के अतिरिक्त कुछ भी सुनाई नहीं दिया। विराट फिर बोला, "मैं जानना चाहता हूं कि वह कौन-सी चीज है, जिसकी वजह से मैंने तुम्हें इस कालकोठरी में डाल दिया ? मैं अपने शरीर पर कोड़े की चोट अनुभव करना चाहता हूं और स्वयं महसूस

करना चाहता हूं कि जेलखाने की जिंदगी कैसी होती है। एक महीने मैं तुम्हारी जगह रहूंगा, जिससे मुझे पता चल जाय कि न्याय के नाम पर मैंने लोगों को कितनी पीड़ा पहुंचाई है। तत्पश्चात् मैं एक बार फिर न्यायाधीश के ग्रासन पर बैठकर निर्णय दूँगा। उस समय मुझे ग्राभास रहेगा कि मेरे निर्णय में कितना वल है। इस बीच तुम स्वतंत्र होकर यहां से चले जाग्रो। मैं तुम्हें चावी दे दूँगा, जिससे तुम द्वार खोलकर प्रकाश की दुनिया में पहुंच जाग्रो। मैं तुम्हें एक महीने की ग्राजादी दूँगा, वशर्ते कि तुम वादा करो कि महीना बीतने पर लौट ग्राग्रोगे। उसके बाद इस पाताल-लोक के ग्रंधकार में से मुझे प्रकाश की प्राप्ति होगी।"

बंदी मूर्त्तिवत् खड़ा रहा। उसकी जंजीर की खड़खड़ाहट ग्रव सुनाई नहीं देती थी।

विराट बोला, "देखो, भगवान सवको देखते हैं। तुम कसम खाग्रो कि महीने भर मौन धारे रहोगे। मैं तुम्हें चावी ग्रौर कपड़े दे दूँगा। चावी तुम जेलर के दरवाजे के वाहर छोड़ जाना ग्रौर ग्राजाद होकर चले जाना। लेकिन इस शपथ से तुम ग्रंधे रहोगे कि ज्योंही महीना वीते, इस चिट्ठी को महाराजा के पास ले जाग्रो, जिससे मैं इस कारागार से मुक्त हो जाऊँ ग्रौर एक वार पुनः सचाई ग्रौर न्याय के साथ फैसले दे सकूँ। तुम ग्रपने सबसे बड़े इष्टदेव की सौगंध खाग्रो कि मेरी वात मानोगे ?"

कंपकंपाती ग्रावाज में, मानो वह पाताल से उठकर ग्राई हो, बंदी ने कहा, "मैं कसम खाता हूं।"

विराट ने उसकी हथकड़ी-बेड़ी खोल दी ग्रौर ग्रपने कपड़े उतार डाले। वोला, "लो भाई, इन्हें पहन लो ग्रौर लाग्रो, ग्रपने कपड़े मुझे दे दो। देखो, ग्रपना चेहरा ढक लेना, जिससे जेलर समझे कि मैं हूं। मेरे वाल ग्रौर दाढ़ी काट डालो, ताकि मुझे

भी कोई पहचान न सके !"

थरथराते हुए अनिच्छापूर्वक बंदी ने विराट के आदेश का पालन किया। विराट की निगाह ही कुछ ऐसी थी कि वह उसकी बात को टाल न सका। अनंतर बहुत देर तक वह चुप-चाप खड़ा रहा, फिर विराट के चरणों में गिरकर उसने कहा, "स्वामी, मुझे यह बर्दाश्त नहीं कि मेरी जगह तुम कष्ट पाओ। हत्या तो मैंने की थी। मेरे हाथ लहू से लाल हो रहे हैं। तुम्हारा फैसला ठीक था।"

विराट बोला, "सुनो, उस फैसले की न्याय्यता का न तो तुम मूल्य आंक सकते हो और न मैं ही आंक सकता हूं, लेकिन जल्दी ही मुझे प्रकाश प्राप्त होगा। जाओ और जो कसम तुमने ली है, उसे पूरा करो। पूरनमासी के दिन मेरी यह चिट्ठी महाराजा को दे देना, जिससे मैं इस जेलखाने से छोड़ दिया जाऊँ। समय परिपक्व होने पर मैं अपने कृत्यों को पहचान सकूँगा और उसके बाद मेरे फैसले अन्याय से रहित होंगे। अब तुम जाओ।"

कैदी ने घुटने टेककर भूमि का चुंबन किया, अनंतर अंधेरे में द्वार बंद होने की ध्वनि हुई। सूराख में से होकर बत्ती की रोशनी एक बार पुनः दीवारों पर पड़ी और फिर रात के बाकी घंटे निस्तब्धता में विलीन हो गये।

४/

अगले दिन सवेरे विराट पर, जिसे किसी ने भी नहीं पह-चाना, सरेआम कोड़ों की मार पड़ी। नंगी पीठ पर जब पहला कोड़ा पड़ा तो मुंह से एक चीख निकल पड़ी; लेकिन उसके बाद चुप रहा। उसके दांत भिंचे थे। सत्तरवें कोड़े पर उसकी चेतना धुंधली पड़ गई और फिर उसे मरे हुए प्राणी की भाँति वहाँ से ले जाया गया।

चेत हुआ तो वह अपनी कोठरी में पड़ा था। उसे लगता था, मानो वह जलते कोयले के बिस्तर पर पड़ा हो। लेकिन उसकी भौंहें ठण्डी थीं और उसे जड़ी-बूटियों की सुगंध आ रही थी। अधखुली आँखों से उसने देखा कि जेलर की पत्नी उसके पास बैठी है और धीरे-धीरे उसके माथे पर पानी डाल रही है। जब विराट ने ध्यानपूर्वक उसकी ओर देखा तो उसे पता चला कि उसकी आंखों में दया झलक रही है। शारीरिक यातना के उस क्षण में विराट ने अनुभव किया कि कष्ट की सार्थकता इसी में है कि उससे दूसरों में करुणा का आविर्भाव होता है। महिला की ओर देखकर वह मुस्कराया और अपनी पीड़ा को भूल गया।

अगले दिन उसमें इतनी शक्ति आ गई कि वह अपने पैरों खड़ा हो ले और उस कोठरी में धीरे-धीरे चल-फिर सके। हर कदम पर उसे ऐसा मालूम होता था कि उसके पैरों के नीचे एक नई दुनिया का निर्माण हो रहा है। तीसरे दिन उसके घाव भरने लगे और उसके शरीर और मस्तिष्क में बल का संचार होने लगा। आगे अब वह निश्चल बैठा रहता था और समय की

गणना छत में से टपकती पानी की बूँदों के द्वारा करता रहता था। उस काल-कोठरी की महान निस्तब्धता अनेक अल्प क्षणों में विभक्त थी, जिसके योग से दिन और रात बनते हैं और हजारों दिन-रातों को पार करके हम जवानी और वृद्धावस्था को प्राप्त होते हैं।

इस दरम्यान कोई भी विराट से बात करने नहीं आया और अंधेरा जैसे उसकी आत्मा में ही घर कर गया, फिर भी उसके अंतर में स्मृतियों के अनेक निर्भर प्रवाहित होने लगे। कलकल-निनाद करते उन निर्भरों ने अपने निर्मल जल से विचार-रूपी सरोवर को परिपूर्ण कर दिया, जिसमें विराट का समूचा जीवन दिखाई देने लगा। जिस चीज को उसने अबतक थोड़ा-थोड़ा करके अनुभव किया था, वह अब इकट्ठी होकर उसके सामने आ गई। उसका मन अबतक कभी भी इतना निर्मल नहीं हुआ था, जितना कि उस जल में प्रतिबिंबित दुनिया को अपनी अंतर्दृष्टि से देखकर इस समय हुआ।

दिन-प्रतिदिन विराट का दृष्टिकोण स्पष्टतर होता गया। अंधकार में चीज़ें रूप धारण करने लगीं और उनकी आकृति उसे साफ आँखों के सामने दिखाई देने लगी। इसी प्रकार उसके अंतर में भी सबकुछ स्पष्ट हो उठा। आत्म-चिंतन से उसे सुखद आनंद प्राप्त हुआ। जैसे ही उसका हाथ उस चट्टानी गुफा की ऊंची-नीची दीवारों से क्रीड़ा करता, स्मृतियों के मायावी आलजाल में बिना भरमाये वह नूतन विचारों के बीच किल्लोल करने लगा। उस अंधकार और एकांत में उसे अपनी प्रकृति का ध्यान ही न रहा। अपने-आप से विमुख होकर विविध रूपों में व्याप्त परमात्मा की सत्ता के प्रति उसकी जागरूकता दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई और अब वह अपनी इच्छा की गुलामी से—मर-मरकर जीने और जी-जीकर

मरने से—मुक्त होकर अपनी कल्पना द्वारा निर्मित जगत में पूर्ण स्वाधीनता के साथ विचरण करने लगा। शरीर से छुटकारा पाने के आह्लाद से उसकी हर घड़ी की चिंताएं मिट गईं। उसे ऐसा भास होने लगा, मानो प्रत्येक क्षण वह अंधकार में धरती की चट्टानी और काली जड़ों की ओर गहरा डूबता जा रहा है; लेकिन साथ ही उसमें एक नए जीवन का संचार भी हो रहा है।

संभवतः उसका यह जीवन उस कीट का जीवन था, जो आँख मूँदकर मिट्टी को कुरेदता है, या फिर शायद उस पौधे का-सा था, जो अपने तने के द्वारा ऊँचे बढ़ने का उद्योग करता है, या शायद उस शांत और निस्तब्ध चट्टान सरीखा था, जिसे स्वयं अपनी आत्मा का कुछ भी ज्ञान नहीं होता।

अठारह रात विराट अपनी इच्छा और जिंदगी की चख-चख से दूर रहकर आत्म-चिंतन के अलौकिक रहस्य का आनंद लेता रहा। जिस चीज को उसने प्रायश्चित्त के रूप में ग्रहण किया था, वह उसे वरदान मालूम होने लगी और वह अनुभव करने लगा कि पाप और उसका प्रतिफल ज्ञान के प्रति सतत जागरूकता के मुकाबले में कुछ भी नहीं है। लेकिन उन्नीसवीं रात को एक ऐसा विचार उसके मन में उठा कि उसकी चुभन से वह फड़फड़ाकर सोते से उठ बैठा। उसे लगा, वह विचार भभकते तकुए की भाँति उसके दिमाग में घुस गया है। भय से उसका शरीर कांप उठा और उसकी उंगलियाँ थर-थर कांपने लगीं, जैसे हवा में पत्तियां कांपती हैं।

वह भयावह विचार था कि कहीं वह बंदी उसके साथ विश्वासघात न कर बैठे और पहले से ही और किसी शपथ में न बंधा हो! वह भूल गया तो? कहीं सालों तक, जबतक कि उसकी हड्डी-पसली सूख न जाय और निरंतर मौन से उसकी जीभ जकड़ न जाय, उसे जेल में ही न पड़ा रहने दे!

इस विचार के उदय होते ही विराट के शरीर में जीवित रहने की इच्छा जाग्रत हो उठी और उसने उन सब आवरणों को विच्छिन्न कर डाला, जो उसे अबतक ढके हुए थे। समय की धारा फिर उसकी आत्मा में प्रवाहित होने लगी और उसके साथ ही भय, आशा और भौतिक संसार की समूची उथल-पुथल उसके अंदर पैदा हो गई। अब वह अपना ध्यान नाना रूपों में व्याप्त परमपिता परमात्मा पर केंद्रित न रख सका। अब वह केवल अपने ही बारे में सोच सकता था। उसकी आंखें दिन का प्रकाश देखने के लिए आतुर हो उठीं। उसकी देह, जो कठोर पाषाणों के बीच अबतक सिकुड़ी पड़ी रही थी, विस्तार पाने, कूदने और भागने की शक्ति प्राप्त करने की आकांक्षा करने लगी। अपनी स्त्री, अपने बाल-बच्चों, अपने घर, अपनी संपत्ति तथा संसार के प्रभावशाली प्रलोभनों के, जिनके उपभोग के लिए पूर्ण जागरूकता तथा खून में गर्मी की आवश्यकता होती है, विचारों से उसका मस्तिष्क भर उठा।

अब से आगे समय ने, जोकि अबतक एक निस्तब्ध तलैया के मैले-कुचैले पानी की भांति, जिसमें विविध आकृतियां प्रति-बिंबित होती रहती हैं, चुपचाप पड़ा था, विराट के मस्तिष्क में बहुत बड़ा रूप धारण कर लिया और उसकी धारा इतनी तेजी से बहने लगी कि उसके विरुद्ध ठहरने के लिए विराट को निरंतर संघर्ष करना पड़ा। वह चाहने लगा कि धारा उसके पैर उखाड़ दे और पानी पर उतराते वृक्ष की भाँति उसे उसकी मुक्ति के ठिकाने पर पहुंचा दे। लेकिन प्रवाह तो उसके विरुद्ध था!

प्रत्येक घड़ी जी-जान से वह धारा के विपरीत तैरने लगा। उसे ऐसा लगने लगा, मानो छत से गिरने वाली बूँदों के बीच के समय का अंतर बहुत बढ़ गया है। अपनी गुफा में वह अब

धैर्यपूर्वक पड़ा नहीं रह सकता था। इस विचार से कि वह पहाड़ी आदमी उसे भूल जायगा और इस काल-कोठरी में उसे वरसों सड़ना पड़ेगा, विराट इतना अधीर हो उठा कि पिंजड़े के पंछी की भांति वह अपनी तंग कोठरी में बराबर इधर-से-उधर चक्कर काटने लगा। वहां की नीरवता से अब उसका गला घुटने लगा और वह दीवारों पर गालियों और शिकायत की वौछार करने लगा। वह अपने को कोसता था, देवी-देवताओं को और महाराजा को गाली देता था। अपनी लहूलुहान उंगलियों को वह निष्ठुर चट्टान पर मारता था और सिर झुकाकर दरवाजे से लगातार टक्कर लेता था। यह क्रिया तवतक चलती रहती जबतक कि वह बेहोश होकर गिर न पड़ता। होश आने पर वह फिर उठ खड़ा होता और फिर टक्कर लेने लगता।

अपने बंदी-जीवन के अठारहवें दिन से लेकर पूर्णिमा के आने तक विराट अत्यन्त भयातुर रहा। खाना-पीना उसे अच्छा नहीं लगता था, कारण कि उसका शरीर चिंता के मारे हैरान था। विचार करना उसके लिए असंभव हो गया था। हाँ, पानी की बूँदें जैसे-जैसे गिरतीं थीं, वह उन्हें होंठों से गिनता रहता था, जिससे पहाड़-सा दिन कैसे ही कट जाय और दूसरा दिन प्रारम्भ हो। इस बीच उसे तो मालूम भी नहीं हुआ, लेकिन उसकी कनपटी के पास के वाल सफेद हो गये।

५/

तीसवें दिन बाहर कुछ शोर हुआ और शांत हो गया। तत्पश्चात् सीढ़ियों पर पैरों की आहट सुनाई दी। दरवाजा खुला और प्रकाश भीतर आया। अंधकार में आवृत्त विराट के आगे महाराजा खड़े थे। स्नेहपूर्ण आलिंगन के साथ महाराजा ने उसका अभिवादन किया और कहा, "तुम्हारी करनी मुझे मालूम हो गई है और वह हमारे बाप-दादों के इतिहासों में उल्लिखित कृतियों की अपेक्षा कहीं अधिक महान है। हमारे जीवन में वह सितारे की मानिंद चमकेगी। आगे आओ, जिससे प्रभु की कृपा से तुम प्रकाशमान हो उठो और आनन्द से पुलकित लोग एक सदाचारी और सच्चे आदमी के दर्शन कर सकें।"

विराट ने हाथ से अपनी आंखों पर छाया कर ली, क्योंकि आदत न रहने से प्रकाश की चौंध उसके लिए कष्टकर थी। एक शराबी की भांति डगमगाता वह उठ खड़ा हुआ। नौकरों को उसे सहारा देना पड़ा। द्वार पर जाने से पहले उसने कहा, "राजन्, आपने मुझे सदाचारी और सच्चा आदमी कहा है; लेकिन अब मैं अच्छी तरह से जानता हूं कि जो दूसरे पर निर्णय देता है, वह अन्याय और भयंकर भूल करता है। इस पाताल-लोक में अब भी कष्ट-पीड़ित लोग हैं, जोकि मेरे फैसले की वजह से यहां पड़े हैं। अब पहली बार मुझे पता चला है कि उन्हें कितनी पीड़ा होती है और मुझे मालूम हुआ है कि बदला लेने का कानून ही अपने-आपमें गलत है। इन बंदियों को मुक्त कर दीजिये और कह दीजिये कि यहां से चले जायं; क्योंकि उनका

जयजयकार मुझे लज्जित करता है।"

महाराजा ने संकेत किया और उनके सेवकों ने भीड़ को तितर-बितर कर दिया। एक वार फिर शांति छा गई। तव महाराजा ने कहा, "तुम्हारा आसन मेरे महल को जानेवाली सीढ़ियों के बुर्ज पर था; लेकिन यातनाओं की अनुभूतियों के कारण पहले के न्यायाधीशों की अपेक्षा तुम अधिक बुद्धिमान हो गये हो, सो अब से तुम मेरे साथ बैठोगे, जिससे मैं तुम्हारी वाणी को सुन सकूँ और तुम्हारी न्यायमत्ता से लाभ उठा सकूँ।"

आवेदन के रूप में विराट महाराजा को प्रणाम करके बोला, "महाराज, मुझे न्यायाधीश के पद से मुक्त कर दीजिये। अब जब मैं यह अनुभव करने लगा हूं कि कोई भी किसी के बारे में निर्णय देने का अधिकारी नहीं है, तव सही निर्णय देना मेरे बस के बाहर है। दण्ड देना परमात्मा के हाथ की वात है, मनुष्य के हाथ की नहीं। भाग्य के मार्ग में जो भी रोड़े अटकाता है, वह अपराध करता है। मैं तोपा प-मुक्त होकर जीवन-यापन करना चाहता हूं।"

"अच्छी बात है, ऐसा ही होगा।" महाराजा ने उत्तर दिया, "मेरे प्रधान न्यायाधीश होने के वजाय तुम मेरे प्रधान सलाहकार होगे और मेरे लिए शांतिकाल और युद्ध की समस्याओं पर विचार किया करोगे तथा कर आदि लगाने के मामलों में मुझे सलाह दिया करोगे, जिससे मेरे सभी कार्य तुम्हारी बुद्धिमत्ता से संचालित हो सकें।"

विराट फिर महाराजा केआगे सिर झुकाकर बोला,"स्वामी, मुझे कोई सत्ता न दीजिये, कारण कि सत्ता का परिणाम कर्म होता है और कौनसा कर्म ऐसा है, जो कि सही है और भाग्य के निर्णय के अनुकूल है? यदि मैं युद्ध की सलाह देता हूं तो मृत्यु के बीज बोता हूं। मेरे मुंह से जो कुछ निकलता है, उससे

कर्म पैदा होता है और मेरे प्रत्येक कर्म का कुछ-न-कुछ परिणाम होता है, जिसे मैं पहले से नहीं देख सकता । केवल वही व्यक्ति न्यायपूर्ण और नेक हो सकता है, जो सब प्रकार के कर्म से मुक्त है और अकेला है । इस एकांतवास में विना किसी से बोले-चाले मैं ज्ञान के जितना निकट और पाप से जितना दूर रहा हूं, उतना पहले कभी नहीं रहा । मुझे प्रसन्नतापूर्वक अपने घर पर रहने की आज्ञा दीजिये । परमात्मा की आराधना के अतिरिक्त मुझे कोई भी काम न हो और इस प्रकार मैं पाप से बचा रहूं ।"

महाराजा ने कहा, "तुम्हारी सेवाओं से वंचित होते मुझे दुःख तो होता है, लेकिन किसी साधु-संत से तर्क करने या किसी नेक और ईमानदार आदमी को उसकी इच्छानुसार चलने से रोकने का दुस्साहस कौन कर सकता है ? जैसे ठीक समझो, रहो । मेरे राज्य के लिए यह बड़े गौरव की बात होगी कि उसकी सीमा के भीतर एक ऐसा व्यक्ति निवास करता है, जो पापमुक्त है ।"

बंदीगृह के द्वार पर उन दोनों ने एक-दूसरे से विदा ली । विराट सूर्य की धूप से चिलकती हवा की सुगन्धि का आनन्द लेता हुआ अकेला घर की ओर चला । अपना हृदय उसने कभी भी इतना हल्का अनुभव नहीं किया था, जितना कि अब, जबकि वह सब प्रकार के कर्म के बंधन से छूट गया था । उसके पीछे नंगे पैरों की हल्की आवाज आ रही थी और जब वह पीछे मुड़ा तो देखता क्या है कि वही अपराधी चला आ रहा है, जिसका दण्ड उसने अपने ऊपर ले लिया था । उस पहाड़ी आदमी ने न्यायाधीश की पद-रज मस्तक पर लगाई और सहमते हुए उल्टे पैरों लौट गया । विराट ने जबसे अपने मृत भाई की चमकीली आँखें देखी थीं, तब से अब आकर वह पहली बार मुस्कराया और प्रसन्न हृदय से घर के भीतर प्रविष्ट हुआ ।

६/

घर लौटने के बाद विराट का समय पूर्ण आनन्द के साथ बीतने लगा। अपनी जाग्रत अवस्था में वह परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करता था, "हे प्रभो! मुझे स्वर्ग के प्रकाश के ही दर्शन देना, छाया के नहीं। मुझे इस दुनिया के नाना रंग दिखाई दें और सुन्दर भूमि की सुगंध का रस प्राप्त हो तथा मैं उस मधुर संगीत को सुनूँ, जिससे प्रत्येक प्रभात सजीव हो उठता है।" उसे मालूम होता था कि वह जो खुली हवा में सांस लेता है और जहाँ जी में आता है, घूमता-फिरता है, वह सब परमात्मा की नवीन और महान देन है। सात्विक स्नेह के साथ वह अपने शरीर पर तथा अपनी स्त्री के मुलायम गात पर और बच्चों की मजबूत देह पर हाथ फेरता था और हर्षपूर्वक अनुभव करता था कि विभिन्न रूप में भगवान उनमें से प्रत्येक में व्याप्त हैं।

जब वह देखता कि अपने जीवन की परिधि को लांघकर उसने किसी दूसरे अनजाने व्यक्ति के भाग्य के साथ हस्तक्षेप नहीं किया और न अदृश्य भगवान के असंख्य मूर्तिमान रूपों में से ही किसी पर आक्रमण किया तो अभिमान से उसकी आत्मा आनन्द-विभोर हो उठती। सवेरे से सांझ तक वह ज्ञान की पुस्तकें पढ़ता और तरह-तरह से उपासना करता रहता—एकांत में चिंतन, आत्मा के साथ तल्लीनता, दीनों के साथ उपकार और उत्सर्ग की प्रार्थना। वह प्रसन्न-चित्त रहता। उसकी वाणी उसके छोटे-से-छोटे सेवक के प्रति भी मधुर रहती और उसके

कुटुंबी-जन उसके प्रति अब जितने अनुरक्त थे, उतने पहले कभी नहीं थे।

जरूरतमंदों को वह सहायता देता था और कष्ट-पीड़ितों को दिलासा देता था। लोगों के समुदाय-के-समुदाय पीठ-पीछे उसके कल्याण की कामना करते थे। अब कोई भी उसे निपुण तलवार चलानेवाला अथवा न्याय का स्रोत नहीं कहता था, क्योंकि अब वह अच्छी सलाह देनेवाला बन गया था। उसके पड़ोसी ही नहीं, सब लोग उसकी सलाह लेने के लिए आते थे। यद्यपि अब वह उस भूमि पर न्यायाधीश नहीं था, फिर भी दूर-दूर से लोग अपना झगड़ा निवटाने के लिए उसके पास आते थे और उसके फैसले को विना किसी हिचकिचाहट के स्वीकार कर लेते थे।

विराट को इससे खुशी होती थी। वह अनुभव करता था कि आदेश देने की अपेक्षा सलाह देना और फैसला देने की अपेक्षा वीच-वचाव करा देना कहीं अच्छा है। अव चूँकि दूसरे के भाग्य पर जवरदस्ती शासन करने अथवा वहुतों के भाग्य-विधाता वनने का उसके हाथ कोई अधिकार नहीं रहा था, उसे ऐसा आभास होता था कि उसकी जिन्दगी दोष-मुक्त है। इस प्रकार अपने जीवन के उस सुनहले प्रहर में वह खूब उल्लास के साथ रहता था।

तीन साल गुजरे, फिर तीन और। वे ऐसी सफाई से वीत गये, जैसे सुख का दिन बात-की-बात में वीत जाता है। विराट की प्रकृति कोमल से कोमलतर होती गई। जव कोई झगड़ा निवटारे के लिए उसके पास आता था तव उसे यह समझने में बड़ी कठिनाई होती थी कि आखिर इस दुनिया में इतना संघर्ष क्यों है और लोग क्यों स्वामित्व के लिए ईर्ष्यालु बनकर एक-दूसरे का गला घोंट रहे हैं, जबकि जीवन के विस्तार के लिए

इतनी जगह उनके लिए खुली पड़ी है और वे अच्छी तरह से जीवित रहकर जीवन का आनंद ले सकते हैं ! उसे किसी से ईर्ष्या नहीं थी, न किसी को उससे। विराट का घर मानो जीवन-रूपी सागर के बीच शांति के द्वीप में स्थित था, जिसे वासनाओं की लहरें या कामुकता की धाराएं छू ही नहीं पाती थीं।

इस शांति-काल के छठवें वर्ष में एक दिन संध्या को विराट सोने चला गया था कि उसे किसी की चीख और कोड़े पड़ने की आवाज सुनाई दी। अपने बिस्तर से वह उठ बैठा और उसने देखा कि उसके लड़के एक गुलाम को बुरी तरह पीट रहे हैं। जमीन पर विठाकर चमड़े के हंटर से उसकी इतनी ठुकाई कर रहे थे कि उसकी देह से खून वह निकला था। गुलाम ने निगाह गाड़कर विराट की ओर देखा और एक बार फिर विराट को लगा, मानो वह अपने उसी भाई की आँखें देख रहा है, जिसकी उसने अपने हाथों से हत्या कर डाली थी। जल्दी से आगे बढ़कर उसने कोड़ा चलाते लड़के की वाँह पकड़ ली और पूछा कि किस्सा क्या है ?

लड़कों ने जो जवाव दिये, उससे विराट को मालूम हुआ कि इस गुलाम का काम चट्टानी झरने से लकड़ी के डोलों में पानी भर-भरकर घर लाने का था; लेकिन कई वार वह देर से घर पहुंचा और कह दिया कि दुपहरी की धूप के मारे थक गया था। हर वार उसे दण्डित किया गया। कल और दिन की अपेक्षा उसकी अधिक मरम्मत हुई तो वह चुपचाप घर से निकल भागा। लड़कों ने घोड़ों पर उसका पीछा किया और जव वह नदी पार कर चुका था, उसे पकड़ लिया। इसके बाद रस्सी से उन्होंने उसे एक घोड़े की जीन से वांध लिया, जिससे कुछ घसिटता और कुछ दौड़ता वह घर आया। उसके पैर छलनी हो गये थे। अव वे उसकी तथा दूसरे गुलामों की भलाई की खातिर,

जो कांपते हुए उसे पिटते देख रहे थे, आदर्श दण्ड दे रहे थे।

विराट ने गुलाम की ओर देखा। उसकी आंखें ऐसे फटी हुई थीं, जैसे जल्लाद के मृत्यु-प्रहार की प्रतीक्षा करनेवाले पशु की फटी होती हैं। उसकी काली आंखों के पीछे विराट को उसी भय का अनुभव हुआ, जिसे वह एक बार स्वयं महसूस कर चुका था।

"छोड़ दो इस आदमी को।" विराट ने अपने लड़कों से कहा, "अपराध की सजा इसे मिल चुकी।"

गुलाम ने स्वामी के चरणों के सामने की रज का चुम्बन किया। यह पहला अवसर था, जब पुत्र अपने पिता से रुष्ट होकर विदा हुए। विराट अपने कमरे में चला गया और उसने हाथ-मुंह धोया। ठंडे पानी के स्पर्श से उसे अचानक ज्ञान हुआ कि वह क्या कर रहा है और उसने अनुभव किया कि चट्टान के कारागार को छोड़ने के बाद पहली बार वह निर्णायक बना है और उसने दूसरे के भाग्य में हस्तक्षेप किया है।

छः वर्ष में प्रथम बार उस रात उसे नींद नहीं आई। अंधकार में पड़े-पड़े उसने कल्पना द्वारा उस गुलाम की भयंकर आँखें (या वे उसी के वध किये हुए भाई की ही आंखें थीं!) देखीं और उसे अपने पुत्रों की क्रोधभरी मुद्रा दिखाई दी। वह बार-बार अपने से पूछने लगा कि क्या उसके बच्चों ने इस नौकर के साथ अन्याय किया? कर्त्तव्य की साधारण अवहेलना पर उसके घर के आंगन की मिट्टी खून से तर हो गई! जरा-सी चूक पर एक जीवित व्यक्ति को कोड़े लगाये गए!

इस अपराध से विराट को उन कोड़ों की मार की अपेक्षा कहीं ज्यादा चोट लगी, जिन्होंने उसकी पीठ को बिच्छुओं के काटने से भी अधिक पीड़ा पहुंचाई थी। यह ठीक था कि शाम को जो दण्ड उसके सामने दिया गया था, वह किसी कुलीन को

नहीं, एक गुलाम को दिया गया था, जिसका शरीर राजसी कानून के अनुसार उसके पैदा होने की तिथि से ही उसके स्वामी के अधिकार में था; लेकिन क्या परमात्मा की आंखों में राजा का यह कानून ठीक था? क्या ईश्वर की निगाह में यह सही हो सकता है कि एक व्यक्ति का शरीर दूसरे के पूर्ण अधिकार में हो? और क्या वह व्यक्ति परमात्मा के सामने निर्दोष ठहराया जा सकता है, जो एक गुलाम की जिंदगी को चोट पहुंचाये या उसे नष्ट कर दे?

विराट बिस्तर से उठा और उसने बत्ती जलाई, ताकि संतों के ग्रंथों में इस सम्बन्ध में कोई आदेश ढूँढ़ निकाले। निश्चय ही वर्णों और संपत्तियों को लेकर आदमी-आदमी के बीच उसे भेद दिखाई दिया, लेकिन नाना प्रकार के जीवों की कृतियों में कहीं भी उसे प्रेम की माँगों की पूर्ति के सम्बन्ध में कोई अन्तर नहीं मिला। ज्ञान का रस वह अधिक-से-अधिक उत्सुकतापूर्वक प्राप्त करता गया, कारण कि उसकी आत्मा कभी भी एक समस्या के प्रति इतनी अधिक जागरूक नहीं हुई थी।

लेकिन अचानक एक क्षण के लिए प्रकाश की लौ अपने स्थान से हटी और फिर बुझ गई। जब अंधकार उसके और दीवारों के बीच छा गया तब अनायास विराट को पता चला कि जिस परिधि को उसकी आँखें अंधेरे में ढूँढ़ रही हैं, वह उसके सुपरिचित कमरे की परिधि नहीं है, बल्कि कुछ समय पूर्व का वह कारागार है, जहाँ भयभीत होकर उसे निश्चयपूर्वक यह पता चला था कि स्वाधीनता मनुष्य का सबसे बड़ा अधिकार है और किसी को भी हक नहीं कि वह दूसरों को जेल में ठेल दे, चाहे वह सजा उम्रभर के लिए हो, या सिर्फ एक साल के लिए। लेकिन फिर भी विराट ने अपनी इच्छा के अदृश्य कारागार में इस गुलाम को बंदी कर रखा था! अपने फैसलों से उसने उसे

जकड़ रखा था, जिससे कि वह आजादी की तरफ एक कदम भी न रख सके।

ज्योंही वह बैठकर सोचने लगा, उसके विचार स्पष्ट होते गये। उसे लगा कि इस प्रकार विचार करने से उसकी बुद्धि खुलती जा रही है और फिर किसी अदृश्य स्थान से प्रकाश आकर उसके अन्दर प्रविष्ट हो गया। अब उसे ज्ञात हुआ कि वह अभी भी इस बात में दोषी है कि उसने अपने संगी-साथियों को अपनी इच्छा का गुलाम बना रखा है और उस कानून के जरिये उसका नाम गुलाम रख लेने दिया है, जिसकी उत्पत्ति दुर्बल मानव द्वारा हुई है, परमात्मा के आदेश से नहीं। विराट ने झुककर प्रार्थना की :

"ओ, सहस्रों रूप वाले प्रभो ! मैं तुझे धन्यवाद देता हूं कि तू अपने समस्त रूपों में से मेरे लिए दूत भेजता है कि वे मुझे अपराधों से उबार लें और तेरी इच्छा के अदृश्य मार्ग पर चलाकर मुझे सदा तेरे निकट ले जायं। हे स्वामी ! मुझे शक्ति दो, जिससे मैं अपने उस अमर भाई की आँखों में उन कल्याणकारी दूतों को पहचान सकूँ, जिसकी आत्मा निरंतर मेरा अनुगमन करती है और मेरी आँखों से देखती है, जिसके कष्टों से मैं स्वयं पीड़ित होता हूं, जिससे कि मैं अपने जीवन को पवित्र बना सकूँ और निर्दोष होकर सांस ले सकूँ।"

विराट का चेहरा फिर प्रसन्न हो उठा। उसकी आँखों से उदासी दूर हो गई और वह आकाश में टिमटिमाते और स्वागत करते तारों तथा सवेरे की ताजगी देने वाली हवा का आनंद लेने के लिए रात में ही घर से निकल पड़ा। बाग में होता हुआ वह नदी पर पहुंचा। पूर्व में जैसे ही सूर्य का उदय हुआ, वह पवित्र जलधारा में कूद पड़ा। अनंतर अपने कुटुंबीजनों से मिलने के लिए घर लौट आया। प्रभात की प्रार्थना के लिए वे सब इकट्ठे हो गये थे।

७/

मधुर मुस्कान के साथ विराट ने कुटुंबीजनों का अभिवादन किया। फिर स्त्रियों को वहां से चले जाने का संकेत करके अपने लड़कों से बोला, "तुम जानते हो कि बरसों से मैं सिर्फ एक ही बात की चिंता कर रहा हूं और वह यह कि मैं ईमानदार और नेक आदमी बन जाऊँ और इस पृथ्वी पर पाप से बचकर जिंदगी बसर करूँ। कल मेरे घर की धरती खून से तर-बतर हो गई। खून भी किसका? एक जिंदा आदमी का! मैं चाहता हूं कि खून बहने के इस अपराध से मैं निर्दोष हो जाऊँ और मेरे घर की छत के नीचे जो भूल हुई है, उसका प्रायश्चित्त करूँ। जिस गुलाम को मामूली से अपराध के लिए इतनी सजा दी गई, वह इसी घड़ी से आजाद हो जायगा। जहां चाहे, जाय, ताकि कयामत के दिन तुम्हारे और मेरे खिलाफ ईश्वर के दरबार में वह गवाही न दे।"

उसके लड़के चुप थे और विराट को अनुभव हुआ कि चुप रहकर वे उसे विरोध की निगाह से देख रहे हैं।

वह बोला, "तुमने कोई जवाब नहीं दिया। मैं तुम्हारी बात सुने बिना कुछ भी नहीं करना चाहता।"

"आप एक अपराधी को आजादी देना चाहते हैं, दण्डित करने की अपेक्षा इनाम देना चाहते हैं!" सबसे बड़े लड़के ने कहा, "हमारे घर में बहुत-से नौकर हैं। इसलिए एक का जाना हमें खलेगा नहीं; लेकिन आप जो कुछ कह रहे हैं, उसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। अगर आप इस आदमी को मुक्त कर

दगे तो फिर दूसरे आदमी जाना चाहें तो उन्हें कैसे रोककर रख सकते हैं ?"

"यदि वे जाना चाहेंगे तो मैं उन्हें चले जाने दूँगा। मैं किसी का भाग्य-विधाता नहीं बनूँगा। जो भी कोई दूसरे के भाग्य का फैसला करता है, वह अपराधी है।"

"आप तो कानून के बंधन ढीले कर रहे हैं।" दूसरे लड़के ने कहा, "ये गुलाम हमारे हैं, ठीक वैसे ही जैसेकि हमारी जमीन हमारी है और उस पर उगनेवाले पेड़ और उन पेड़ों के फल सब हमारे हैं। चूँकि वे आपकी सेवा करते हैं, वे आपसे बंधे हुए हैं और आप उनसे बंधे हुए हैं। आप जिस चीज को तोड़ रहे हैं, वह परम्परागत है और हजारों वर्षों से चली आ रही है। गुलाम अपनी जिंदगी का खुद मालिक नहीं है, बल्कि अपने मालिक का दास है।"

"परमात्मा की ओर से हमें केवल एक ही अधिकार है, वह है जीने का। वह अधिकार सभी को प्राप्त है। तुमने अपनी बात मुझे बताकर अच्छा ही किया, क्योंकि जब मैं यह सोच रहा था कि मैं अपराध से अपने को बचा रहा हूं, मैं अंधकार में था। इन तमाम सालों में मैं दूसरों की जिंदगी छीनता रहा हूं। अब अंत में मुझे स्पष्ट दिखाई देता है कि ईमानदार आदमी कभी भी मनुष्यों को जानवरों के रूप में परिणत नहीं कर सकता। मैं सब गुलामों को मुक्त कर दूँगा, जिससे कि मैं उनके प्रति अपराध से अपने को बरी कर सकूँ।"

विरोध से लड़कों की त्यौरियां चढ़ गईं। सबसे बड़े ने हठ-पूर्वक कहा, "यह तो बताइये कि धान की खेती को सूखने से बचाने के लिए कौन सिंचाई करेगा ? कौन ढोरों को चराने ले जायगा ? आपकी सनकों के कारण क्या हम लोग नौकर बन जायं ? जिंदगी भर आपने तो हाथ भी नहीं हिलाया और न

कभी इस बात की चिन्ता की कि आपकी जिंदगी दूसरों की मेहनत पर चलती है। जिस बिस्तरपर आपपड़े रहते थे, उसे दूसरे तैयार करते थे और जबतक आप सोते थे, एक गुलाम आपकी हवा करता रहता था। अब आप अचानक सब गुलामों को निकाल वाहर किये दे रहे हैं, जिससे आपके बेटे, आपके ही खून से पैदा हुए लोग, काम में पिसें ! क्या आप चाहते हैं कि बैलों के जुए निकालकर हम उन्हें भी अलग कर दें और खुद हल को खींचें, जिससे वह आर लगने से छुटकारा पा लें ? आदमियों की तरह इन मूक पशुओं को भी भगवान ने जीवन दिया है। आज जो व्यवस्था है, उसमें दख़लंदाजी न करें, क्योंकि वह भी परमात्मा की ओर से है। धरती अनिच्छापूर्वक फल देती है, ताकत के जोर पर। संसार का कानून बल है और हम उससे बच नहीं सकते।"

"लेकिन मैं बचूंगा। बल शायद ही कभी ठीक होता है। मैं अपनी जिंदगी सचाई के साथ विताना चाहता हूं।"

"सबकुछ बल के अधीन होता है, चाहे वह आदमी पर स्वामित्व हो या पशुओं पर अथवा कि इस भूमि पर। जहां आप स्वामी हैं, वहां आपके लिए आवश्यक है कि आप विजेता भी हों। जिसके हाथ स्वामित्व है, वह मनुष्यों के भाग्यों के साथ बंधा है।"

"लेकिन मैं उन तमाम चीजों से अपने को वरी कर दूंगा, जो मुझे पाप से बांधती हैं। इसलिए मैं तुम्हें आदेश देता हूं कि गुलामों को छोड़ दो और जरूरी काम अपने हाथ से करो।"

लड़कों की आँखें चमक उठीं और वे मुश्किल से अपना गुस्सा रोक सके। सबसे वड़े ने उत्तर दिया, "आपने कहा था कि आप किसी भी व्यक्ति की इच्छा पर दबाव नहीं डालना चाहते। आप अपने नौकरों को भी आज्ञा नहीं देंगे, ताकि आप

पाप के भागी न बनें, लेकिन ग्राप हमसे कहते हैं कि यह करो, वह करो, ग्रौर हमारे जीवन में हस्तक्षेप करते हैं। वोलिये, किस तरह ग्राप परमात्मा ग्रौर ग्रादमी की निगाह में यह सही कर रहे हैं ?"

विराट वहुत देर तक खामोश रहा। जव उसने निगाह ऊपर उठाई तो देखा कि लड़कों की ग्राँखों में लालच की लौ जल रही है। उसकी ग्रात्मा दुःखित हो उठी। धीरे-से बोला, "तुमने मुझे एक सवक सिखाया है। यह मेरा काम नहीं है कि मैं तुमपर किसी प्रकार का दवाव डालूँ। घर ग्रौर दूसरी चीजों को तुम ले लो ग्रौर जैसे मुनासिव समझो, ग्रापस में बटवारा कर लो। इन चीजों में मेरा कोई भाग या भाग्य नहीं होगा ग्रौर न उस पाप में, जो उनके द्वारा होगा। तुमने ठीक ही कहा है कि जो शासन करता है, वह दूसरों की स्वतंत्रता का ग्रपहरण करता है; लेकिन सवसे बुरी बात तो यह है कि वह स्वयं ग्रपनी ग्रात्मा को गुलाम बनाता है। जो पाप से वचकर रहना चाहता है, उसे घरवार के स्वामित्व ग्रौर दूसरे की भाग्य-व्यवस्था से मुक्त रहना चाहिए। दूसरों की मजदूरी पर उसकी गुज़र-वसर नहीं होनी चाहिए ग्रौर उसे उन वस्तुग्रों को ग्रहण नहीं करना चाहिए, जिनके उत्पादन में दूसरों ने पसीना वहाया हो। स्त्रियों के साथ भोग-विलास तथा संतोषजनित ग्रालस से उसे दूर रहना चाहिए केवल; वही व्यक्ति, जो ग्रकेला रहता है, परमात्मा के साथ रहता है; कर्मठ व्यक्ति को ही परमात्मा की ग्रनुभूति होती है। गरीवी ही परमात्मा को पूर्णतया ग्रनुभव करती है। मेरे लिए जरूरी है कि ग्रपनी भूमि के निकट रहने की ग्रपेक्षा भगवान के निकट रहूं, कारण मैं पाप से बचकर रहना चाहता हूं। घर-संपत्ति ले लो ग्रौर शांतिपूर्वक उसका बंटवारा कर लो।"

विराट मुड़ा ग्रौर लड़कों को छोड़कर चल दिया। उसके लड़के भौंचक्के-से खड़े रहे। उनका लालच पूरा हुग्रा, इसका उन्हें सुख तो था, लेकिन ग्रपने ग्रंतर में वे बड़े लज्जित थे।

रात होने पर विराट घर से निकल पड़ने के लिए तैयार हुआ। साथ में ली उसने एक लाठी, भिक्षा का एक पात्र, काम करने के लिए एक कुल्हाड़ी, भोजन के लिए थोड़े से फल और कुछ ताड़-पत्र, जिनपर संतों की बानी खुदी थी। घुटनों ऊपर कपड़े करके, पत्नी-बच्चे अथवा घर के किसी भी व्यक्ति से विदाई लिये बिनाउसने घर छोड़ दिया।

सारी रात चलकर वह उस नदी के किनारे आया, जिसमें उसने अपनी चेतन अवस्था की भयंकर घड़ी में एक बार अपनी तलवार फेंक दी थी। घाट से उसने नदी पार की और दूसरे किनारे-किनारे धारा से ऊपर की ओर चला, जहां आदमी का नामो-निशान भी नहीं था और जहां की धरती की कभी जुताई नहीं हुई थी।

दिन निकलने पर वह एक ऐसे स्थान पर पहुंचा, जहाँ एक पुराने आम के पेड़ पर बिजली गिर गई थी और उसकी आग से जंगल का कुछ हिस्सा साफ हो गया था। यहाँ पर जल की धारा एक बड़ा मोड़ लेकर धीरे-धीरे बह रही थी और उसमें अनगिनत चिड़ियां निडर होकर पानी पी रही थीं। इस प्रकार सामने नदी का सुन्दर दृश्य था और पीछे पेड़ों की घनी छाया थी। धरती पर जगह-जगह जंगली पेड़ थे, जिनमें से कुछ बिजली की वजह से नष्ट हो गये थे। कुछ छोटे-छोटे पौधे उग रहे थे। विराट ने जंगल की इस साफ, निर्जन भूमि के बारे में सोचा और निश्चय किया कि यहीं पर अपनी झोंपड़ी बनावे। अपनी

वाकी जिंदगी को वह अपने संगी-साथियों से दूर और पाप से मुक्त रहकर चिंतन में बिता देगा।

झोपड़ी बनाने में उसे पांच दिन लग गये; क्योंकि उसके हाथ काम करने के आदी नहीं थे। वह पूरी हो गई तब भी उसे हर रोज कसकर काम करना पड़ता था। भोजन के लिए फलों की खोज करनी पड़ती थी। जंगल की घासपात को भी, जो कि निरं-तरउगती रहती थी, साफ रखने के लिए मेहनत की जरूरत थी। भूखे चीते रात को जंगल में घूमते रहते थे। उनसे रक्षा के लिए कंटीली लकड़ियों की बाड़ भी जरूरी थी। आदमियों का कोला-हल वहां कभी नहीं सुनाई दिया, न उसकी एकाग्रता ही में कभी विघ्न पड़ा। नदी के जल की भाँति शांतिपूर्वक उसके दिन कटने लगे और सतत प्रवाहित झरने की भाँति उसमें नवीन रस का संचार होने लगा।

चिड़ियों ने देखा कि आगंतुक चुपचाप काम में लगा रहता है। उससे उन्हें भयभीत होने की जरूरत महसूस नहीं हुई और थोड़े ही दिनों में उन्होंने झोंपड़ी की छत में अपने घोंसले वना लिये। विराट बड़े-बड़े फलों के बीज बिखेर देता था और उनके भोजन के लिए फल रख देता था। धीरे-धीरे मित्रता वढ़ती गई और वे उसके बुलाने पर ताड़वृक्षों से फुदककर नीचे आने-जाने लगीं। विराट उनके साथ खेलने लगा और चिड़ियां भी विना किसी डर के उसकी पकड़ में आ जाने लगीं। एक दिन जंगल में उसे एक छोटा-सा बंदर जमीन पर पड़ा मिला। उसका पैर टूट गया था और वह वच्चे की तरह बिलख रहा था। विराट ने उसे उठा लिया और अपनी झोपड़ी में ले आया। जब वह अच्छा हो गया तो उसे पाल लिया। बन्दर पालतू हो गया और मजे में उसकी नकलें और भक्तिपूर्वक सेवा करने लगा।

इस प्रकार विराट के चारों ओर जीवित पशु-पक्षी थे, लेकिन

इस बात को वह कभी भी नहीं भूला कि आदमियों की तरह पशुओं में भी हिंसा और बुराई के भाव मौजूद रहते हैं। वह देखता था कि किस प्रकार घड़ियाल एक दूसरे को काटते हैं और गुस्से में भरकर एक-दूसरे का पीछा करते हैं; किस प्रकार नदी से चिड़ियाँ मछलियां ले आती हैं और किस प्रकार सांप कुंडली भरकर चिड़ियों को हड़प जाते हैं! प्रलयदेव ने दुनिया को विनाश की भयंकर जंजीर से जकड़ रखा है, इस नियम की सचाई को उसे स्वीकार करना ही पड़ा। फिर भी यह अच्छा ही था कि वह उन संघर्षों का दर्शक-मात्र था और उस विनाश और मुक्ति के विशाल चक्र में वह निर्दोष होकर रह रहा था।

एक वर्ष और कई महीनों तक उसने आदमी की शक्ल भी नहीं देखी। फिर एक दिन ऐसा हुआ कि एक शिकारी हाथी का पीछा करता हुआ नदी के उस स्थान पर आया, जिसके दूसरी ओर हाथी ने पानी पिया था। शिकारी को यहां एक आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई दिया। संध्या के सुनहले प्रकाश में एक सफेद दाढ़ी-वाला आदमी अपनी छोटी-सी कुटिया के सामने बैठा था। चिड़ियां उसके सिर पर चहचहा रही थीं और एक बन्दर उसके पैरों में बैठा पत्थर से उसके लिए अखरोट तोड़ रहा था। वह आदमी पेड़ की फुनगी की ओर देख रहा था, जहां रंग-विरंगे वहुत से तोते टें-टें कर रहे थे। जब उसने इशारा किया तो वे उसके हाथों पर आकर बैठ गये। शिकारी ने सोचा कि वह किसी संत के दर्शन कर रहा है, जिसके विषय में लिखा है—"पशु-पक्षी उससे आदमी की वोली में बात करते थे और फल उसके पैरों तले उगते थे। अपने होंठों से वह तारों को तोड़ सकता था और फूंक मारकर चन्द्रमा को उड़ा सकता था।"

वह शिकारी शहर की ओर तेजी से चला कि वहां के लोगों को बतादे कि उसने क्या दृश्य देखा है!

अगले दिन नदी के उस पार किनारे पर उस आश्चर्य को देखने के लिए बहुत-से लोग आ पहुंचे। भीड़ तेजी से बढ़ती गई और अन्त में एक आदमी ऐसा भी आया, जो विराट को पहचानता था। खबर चारों ओर फैलते-फैलते राजा के कानों में भी पहुंची, जिन्हें अपने स्वामि-भक्त सेवक के खोने का बड़ा दुःख था। महाराजा ने नावों का एक बेड़ा तैयार करने का आदेश दिया, जिसमें अट्ठाईस मल्लाह थे। उन्होंने बड़ी ताकत लगाकर पतवार चलाये और अंत में बेड़ा विराट की झोंपड़ी के सामने आ पहुंचा। महाराजा के लिए कालीन बिछा दिया गया। वह उतरे और उस तपस्वी के निकट गये। आठ महीने से विराट ने आदमी की बोली नहीं सुनी थी। मुश्किल से उसने अपने अतिथि का अभिवादन किया और प्रजा जिस प्रकार अपने शासक को प्रणाम करती है, उस प्रकार प्रणाम करना वह भूल गया। बोला, "महाराजा, आपका आना कल्याणकारी हो!"

महाराजा ने उसे छाती से लगा लिया।

"वर्षों से पूर्णता की ओर तुम्हारी प्रगति को मैं ध्यानपूर्वक देख रहा हूं और अब मैं नेकी के दुर्लभ चमत्कार को देखने आया हूं, जिससे मुझे यह पता चल जाय कि नेक आदमी किस प्रकार रहता है!"

विराट ने सिर झुका लिया। बोला, "मेरा समूचा ज्ञान यह है कि मैंने आदमियों के बीच रहना भुला दिया है, जिससे मैं सब पापों से बचकर रह सकूं। एकांतवासी आदमी अपने को ही सीख दे सकता है, दूसरों को नहीं। मैं नहीं जानता कि मैं जो कुछ कह रहा हूं, वह बुद्धिमानी है। मैं यह भी नहीं जानता कि मैं जो कुछ अनुभव कर रहा हूं, वह आनन्द है। मेरे पास सलाह देने या सिखाने के लिए कुछ भी नहीं है। एकांतवासी का ज्ञान दुनिया के ज्ञान से भिन्न है। चिंतन के नियमों में और

कर्म के नियमों में बड़ा अन्तर है।"

"लेकिन यह देखने भर से ही कि एक नेक आदमी कैसे रहता है, कुछ-न कुछ शिक्षा मिलती है।" महाराजा ने उत्तर दिया, "तुम्हारे मुख के दर्शन करके ही मुझे आनन्द प्राप्त हुआ है। मैं और कुछ नहीं चाहता। अपने राज्य में क्या मैं तुम्हारी कोई इच्छा पूर्ण कर सकता हूं? अपने कुटुंबियों को तुम कोई संदेशा देते हो?"

"स्वामी, अब मेरा अपना कुछ भी नहीं है, या इस पृथ्वी पर सबकुछ मेरा ही है। मैं यह भूल गया हूं कि और घरों के बीच कभी मेरा भी एक घर था, या बच्चों के बीच मेरे भी बच्चे थे। जिसका कोई घरवार नहीं, उसी की सारी दुनिया घर है। जिसने जीवन के बंधनों को काट डाला है, उसी के हिस्से में सच्चा जीवन आया है। जो अबोध है, उसी को पूर्ण शांति है। मेरी केवल यही इच्छा है कि इस पृथ्वी पर मेरा जीवन पाप-मुक्त रहे।"

"अच्छा विदा! अपनी उपासना में मेरा स्मरण कर लिया करना।"

"मैं तो परमात्मा का स्मरण करता हूं और इस प्रकार आपका और इस पृथ्वी पर बसनेवाले सबका, जो भगवान के ही अंग हैं, जो उसी की सांस के द्वारा सांस लेते हैं, स्मरण करता हूं।"

महाराजा का बेड़ा जल-धारा में चला गया और फिर कई महीने बीत गये, जबकि उस तपस्वी को पुनः आदमी की बोली सुनने का अवसर मिला।

९/

विराट की प्रसिद्धि फिर सारे देश में फैल गई। दूर-दूर के देहातों और समुद्र-तट की झोंपड़ियों में उस तपस्वी की खबर पहुंची, जिसने अपने घर और अपनी भूमि का त्याग कर दिया था, जिससे कि वह चिंतन का जीवन व्यतीत कर सके। अब उसे गुणों का चौथा नाम दिया गया, अर्थात् 'एकांतवासी सितारे' के नाम से उसकी ख्याति फैल गई। मंदिरों में पुजारी उसके त्याग की प्रशंसा करने लगे। महाराजा उसकी चर्चा अपने नौकर-चाकरों में करने लगे और जब कोई न्यायाधीश अपना फैसला देते तो कहते, "परमात्मा करे, मेरे शब्द उतने ठीक हों, जितने विराट के, जो अब केवल भगवान के लिए जीवित रहता है और जो सारे ज्ञान से परिचित है।"

प्रायः ऐसा होता था और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों यह और भी अधिक होने लगा कि लोग अपनी करनी की बुराई अनुभव करके और अपने जीवन को निस्सार समझ कर अपना घरबार और सम्पत्ति त्याग कर विराट की तरह झोंपड़ी बनाने और भगवान की आराधना करने के लिए जंगल में चले जाते थे। संसार में स्वयं उदाहरण उपस्थित करना सबसे उत्तम चीज है। प्रत्येक शुभ कर्म से दूसरों में भला बनने की इच्छा पैदा होती है और वह इच्छा सुप्तावस्था से जागकर तीव्र गति से काम में लग जाती है। जिनकी आँखें खुल गईं, उन्हें पता चला कि उनका जीवन कितना निस्सार है। उन्हें वह खून दिखाई देने लगा, जो उनके हाथों में लगा था और वह पाप

भी, जिसके धब्बे उनकी आत्मा पर पड़े थे। वे उठे और एकांत में चले गये। शरीर को कम-से-कम आवश्यकता भर मिल गया तो उसी से संतुष्ट होकर चिंतन में लीन हो गये। फल इकट्ठे करने के लिए जब वे बाहर निकलते और उन्हें कोई मिल जाता तो वे अभिवादन में एक शब्द भी मुंह से न निकालते थे कि कहीं इससे कोई नया सम्बन्ध न स्थापित हो जाय। एक-दूसरे को देखकर वे हार्दिकता के साथ मुस्करा उठते थे और उनकी आत्माएँ शांति का अभिवादन कर देती थीं। साधारणजन इस जंगल के बारे में कहने लगे कि वहाँ तो साधु-संत बसते हैं। कोई भी शिकारी इस भय से वहाँ नहीं आता था कि हत्या करके वह उस पवित्र स्थान को कहीं कलुषित न कर दे।

एक दिन सवेरे, जबकि विराट जंगल में टहल रहा था, उसे एक संन्यासी जमीन पर निश्चल पड़ा हुआ मिला। उसे उठाने के लिए जब वह झुका, तो उसे मालूम हुआ कि उसका शरीर निर्जीव है। विराट ने उस मृत साधु के नेत्र वन्द कर दिये, फिर प्रार्थना के कुछ शब्द कहे। अनन्तर उस शव को जंगल से बाहर ले जाने का प्रयत्न करने लगा। उसने इरादा किया था कि उसके लिए चिता बनाकर उसे जला देगा, लेकिन फलों की मामूली खुराक से विराट दुर्बल हो गया था और वह बोझा उसकी शक्ति से बाहर था। मदद की तलाश में उसने घाट पर से नदी पार की और निकटवर्ती ग्राम की ओर चला।

गाँववालों ने उस तपस्वी को देखा, जिसे उन्होंने 'एकांतवासी सितारे' का नाम दे रखा था, अत्यन्त विनम्रतापूर्वक वे लोग आये और पूछा, आप क्या चाहते हैं? पता चला तो वे तुरन्त सहायता पहुंचाने के लिए तैयार होने लगे। विराट जहाँ कहीं गया, स्त्रियों ने उसका अभिवादन किया, बच्चे भौंचक्के से खड़े हो गये और कुतूहल के साथ देखने लगे कि वह चुपचाप

कैसे आगे बढ़ता है। आदमी अपने-अपने घरों से निकलकर अपने उस महान अतिथि को प्रणाम करने और उसका आशीर्वाद लेने के लिए आये। विराट इस अपार जन-समूह के बीच संतोष की एक मुस्कराहट के साथ आगे बढ़ता गया। वह अनुभव करता था कि चूँकि अब वह किसी बन्धन में उनके साथ नहीं बंधा है, अतः उसका प्रेम उनके प्रति कितना पवित्र और कितना अधिक है।

हर जगह सबका हार्दिक अभिवादन स्वीकार करता हुआ जब वह अन्तिम झोंपड़ी पर पहुंचा तो देखता क्या है, उसके बाहर एक स्त्री बैठी है और उसकी आँखों में, ज्योंही उसने विराट की ओर देखा, घृणा भर आई। विराट कांप उठा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि अपने वध किये हुए भाई की कठोर और उसे दोषी ठहरानेवाली जिन आँखों को वह भूल चुका था, उन्हें पुनः देख रहा है। एकांतवास के इन वर्षों में उसकी आत्मा किसी से बैर करने की अनभ्यस्त हो गई थी। उसने अपने को समझाने का प्रयत्न किया कि वह उसकी निगाह का गलत अर्थ समझा है। लेकिन जब उसने पुनः देखा तो वे आंखें वैसी-की-वैसी घृणा के साथ उसे देख रही थीं। अपने को संभालकर विराट उस झोंपड़ी की ओर बढ़ा। स्त्री भीतर चली गई, लेकिन भीतर अंधेरे में से उसकी आँखें जंगली चीते की जलती आंखों की भाँति बड़ी भयंकरता से उसकी ओर घूर रही थीं।

विराट ने साहस किया और मन-ही-मन सोचने लगा—इस स्त्री को, जिसे मैंने पहले कभी नहीं देखा, मैं कैसे चोट पहुंचा सकता हूं? मेरे विरुद्ध उसमें इतनी घृणा कैसे पैदा हो गई है? कहीं-न-कहीं कुछ गलती जरूर है और मैं उसका पता लगाऊंगा।

आगे बढ़कर विराट ने द्वार खटखटाया। कोई उत्तर नहीं मिला। फिर भी वह अनुभव कर रहा था कि उस अपरिचित

स्त्री की आंखें घृणा से भरी हैं। धीरज के साथ उसने फिर दरवाजा खटखटाया। थोड़ी देर प्रतीक्षा की और एक याचक की भाँति फिर किवाड़ों को थपथपाया। अन्त में हिचकिचाती हुई स्त्री द्वार पर आई। उसका चेहरा अब भी स्याह था और विराट के प्रति विरोध के भाव प्रदर्शित कर रहा था।

"तुम मुझसे और क्या चाहते हो?" स्त्री ने गुस्से से पूछा।

विराट ने देखा, क्रोध से वह इतनी काँप उठी थी कि दरवाजे के खम्भे का सहारा लेकर उसे अपने को संभालना पड़ा।

फिर भी जब विराट ने उसके चेहरे को देखा तो उसका हृदय हल्का हो गया, क्योंकि उसे विश्वास हो गया कि उसने उस स्त्री को पहले कभी नहीं देखा। वह जवान थी और विराट जीवन की डगर पर बहुत आगे बढ़ चुका था। दोनों के मार्ग कभी एक-दूसरे से नहीं मिले और वह कभी भी उसे कोई दुःख नहीं पहुंचा सकता था।

"मैं तुम्हें शांति पहुंचाना चाहता हूं, बहन।" विराट ने उत्तर दिया। "और मैंने तुमसे पूछा कि तुम इतनी भयंकर निगाह से मेरी ओर क्यों देखती हो? क्या मैं तुम्हारा दुश्मन हूं? क्या मेरे द्वारा तुम्हारी कोई हानि हुई है?"

"तुमने मुझे क्या हानि पहुंचाई है!" वह घृणा के साथ मुस्कराई, "हां, तुम मेरा क्या बिगाड़ सकते हो! हां, बस थोड़ा-सा बिगाड़ किया है। मेरा घरबार भरा-पूरा था। तुमने उसे सूना कर दिया। तुमने मेरे प्रियतम को मुझसे छीन लिया। तुमने मेरी जिंदगी को मौत के हवाले कर दिया। यहां से तुम चले जाओ, जिससे मैं तुम्हें फिर न देख पाऊं, नहीं तो मैं अपने गुस्से को काबू में नहीं रख सकूँगी।"

विराट ने फिर उसकी ओर देखा। उसकी आँखें इतनी क्रोध से भरी थीं कि विराट को लगा कि वह आपे से बाहर है। विराट ने कहा, "मैं वह आदमी नहीं हूं, जिसकी तुम कल्पना करती हो। आदमियों से मैं तो दूर रहता हूं और मैं किसी के भी भाग्य में हस्तक्षेप नहीं करता। किसी दूसरे आदमी को भूल से तुम मुझे समझ बैठी हो।" इतना कहकर विराट वहां से चलने को मुड़ा।

गुस्से से स्त्री ने उसके पीछे चीत्कार किया, "मैं तुम्हें अच्छी तरह पहचानती हूं। तुम विराट हो, जिसे लोग 'एकांतवासी सितारा' कहते हैं और चारों गुणों से विभूषित करके लोग जिसकी प्रशंसा करते हैं। लेकिन मैं तुम्हारी नामवरी नहीं करूंगी। मेरी जीभ तो तुम्हें उस समय तक चिल्ला-चिल्लाकर कोसती रहेगी, जबतक कि मेरी शिकायत भगवान के दरबार में नहीं पहुंच जाती। आओ, और चूँकि तुम पूछते हो तो लो देखो, तुमने मेरा क्या बिगाड़ा है!"

आश्चर्य-चकित विराट की बाँह पकड़कर स्त्री उसे घर के भीतर ले गई और दरवाजा खोलकर नीची छत के एक अन्धेरे कमरे में उसे ले जाकर खड़ा कर दिया, जहाँ चटाई पर एक निश्चल शरीर पड़ा था। विराट उसे देखने के लिए झुका और फिर कांपकर पीछे हट गया। एक मरा हुआ बालक पड़ा था—बालक, जिसकी आंखें उसके अमर भाई की आंखों की भाँति उसकी ओर देख रही थीं। दुःख से अधमरी स्त्री उसके पास खड़ी थी। उसने कराहकर कहा, "यह तीसरा, मेरी कोख का आखिरी बालक था और तुमने उसकी और दूसरों की हत्या कर डाली—तुमने, जिसे लोग संत और भगवान का चाकर कहते हैं।"

प्रतिवाद में जब विराट ने मुंह खोलना चाहा तो वह फिर

फूट पड़ी, "इस करघे को देखो। इस खाली तिपाई को देखो। इसी पर बैठकर मेरा पति हर रोज कपड़ा बुना करता था। इस देश में उसके बराबर चतुर और कोई जुलाहा नहीं था। दूर-दूर से लोग आकर उससे कपड़े बुनवाते थे और उसकी मेहनत से हमारी ज़िंदगी चलती थी। हमारे दिन चैन से कट रहे थे, क्योंकि पारातिक भला आदमी और मेहनती था। बुरी सोहवत से वह बचता था और पाजी आदमियों से दूर रहता था। उससे मेरे तीन बच्चे हुए। हमने उनकी अच्छी तरह से परिवरिश की। उम्मीद थी कि बड़े होकर वे अपने बाप की तरह हो जायंगे, भले और नेक। तब एक दिन एक शिकारी आया। भगवान की दया से उसने इस गाँव में पहले कभी पैर नहीं रखा था। उससे पारातिक को मालूम हुआ कि एक आदमी ने घरवार और सब साज-सामान छोड़ दिया है और दुनियादारी की जिंदगी विताते हुए भी उसने भगवान के चरणों में अपने को सौंप दिया है। शिकारी ने बताया कि अपने ही हाथों उसने अपने लिए एक झोंपड़ी वना ली है।

"उस दिन से पारातिक हम सबसे बच-बचकर रहने लगा। शाम को वह ध्यान में लगा रहता और कभी-कभी ही बोलता। एक रात को मेरी आँख खुली तो देखती क्या हूं कि वह मेरे पास से उठकर जंगल में चला गया है—उस जंगल में, जहाँ तुम यह सोचकर रहते हो कि परमात्मा का चिंतन कर सको और जिसे सब साधु-संतों का निवास कहते हैं। लेकिन जब पारातिक ने अपने बारे में सोचा, वह हमें भूल गया और उसे यह भी ध्यान न रहा कि उसकी मेहनत पर ही हमारी गुजर-बसर होती थी।

"हम लोग ग़रीबी के चक्कर में आ गए। बच्चे रोटी के लिए तरसने लगे। एक-एक करके मरते गये और आज तीनों में

से आखिरी भी चल बसा। यह सब तुम्हारी करतूत है। तुम्हीं ने पारातिक को भरमाया। तुम भगवान के पास पहुंच सको, उसीका यह नतीजा है कि मेरी इस देह से पैदा हुए तीन बच्चे मिट्टी में मिल गये। ओ पाखंडी, तुम अपना बचाव कैसे करोगे, जब मैं भगवान के सामने कहूंगी कि मेरे नन्हें बच्चों ने इतना कष्ट पाया, जबकि तुम चिड़ियों का पेट भर रहे थे और दुःख से बचकर दूर रह रहे थे ? तुम कैसे इस बात का प्रायश्चित्त करोगे कि तुम ललचाकर एक ईमानदार आदमी को उसके काम से, जिससे उसकी और उसके मासूम बच्चों की रोजी चलती थी, इस पागलपन के विचार से भरमा ले गए कि अपने साथी-संगियों के बीच मेहनत की जिंदगी बिताने की बनिस्वत वह एकांत में परमात्मा के ज्यादा पास रहेगा ?"

विराट भयातुर हो उठा और उसके होंठ काँपने लगे। बोला, "मैं नहीं जानता था कि मेरी देखा-देखी लोगों को ऐसा करने का प्रोत्साहन मिलेगा। जो मार्ग मैंने चुना, उस पर मैं अकेले ही चलना चाहता था।"

"ओ संत, तुम्हारा ज्ञान कहाँ है, अगर तुम एक ऐसी बात को भी नहीं समझ पाते, जिसे एक बालक तक जानता है। दुनिया के सारे काम भगवान के काम हैं और कोई भी आदमी अपनी इच्छा से कर्म से नहीं बच सकता और न जिम्मेदारी से ही पीछा छुड़ा सकता है। घमंड से तुम्हारा दिमाग तो आसमान पर पहुंच गया था, जब तुमने सोचा कि तुम अपने कर्मों के मालिक हो सकते हो और तुम दूसरों को सीख दे सकते हो। जो चीज तुम्हारे लिए अमृत थी, मेरे लिए हलाहल हो गई और तुमने ही मेरे इन बच्चों को मरवा डाला।"

विराट ने कुछ देर सोचा और फिर उसकी बातों को स्वीकार करके सिर झुका लिया।

"तुम जो कहती हो, ठीक कहती हो और मैं देखता हूं कि संतों के एकांतवास की अपेक्षा कहीं अधिक सचाई दुःख की एक सिसकी में है। मुझे जो सीख मिली है, वह अभागों से मिली है और मुझे जो कुछ दीखा है, उसका दर्शन दुःखियों और सदा जीवित रहनेवाले मेरे भाई की निगाह कराया है। सचमुच मैं भगवान के सामने उतना विनम्र नहीं हो सका, जितने की मैंने कल्पना की थी, बल्कि मैं अभिमानी बना। इसका ज्ञान अब मुझे उस दुःख से हुआ है, जिसकी पीड़ा मैं इस समय अनुभव कर रहा हूं। यह ठीक है कि जो निष्क्रिय रहता है वह भी कर्म करता है, जिसके लिए इस पृथ्वी पर वही जिम्मेदार होता है। एकांतवास करनेवाला भी अपने भाइयों के बीच रहता है। मैं तुमसे क्षमा की याचना करता हूं। जंगल से अब मैं इस आशा से लौट आऊँगा कि पारातिक भी मेरी तरह लौटकर तुम्हारी कोख में नये जीवन को जन्म दे।"

विराट एक बार फिर स्त्री के आगे झुका और आगे बढ़ गया। उस जाती काया को स्त्री की आंखें आश्चर्य के साथ देखने लगीं और उसके मन से क्रोध का भाव अनायास बिल्कुल दूर हो गया।

१०/

विराट ने एक रात और अपनी कुटिया में गुजारी। एक बार फिर उसने सूर्यास्त के बाद आसमान में चमकते तारे देखे। सवेरे के समय उनका धुंधला पड़ जाना भी देखा। चिड़ियों को दावत के लिए एक बार फिर उसने बुलाया और उन्हें प्यार किया। फिर लाठी और पात्र, जिन्हें वह वर्षों पहले अपने साथ लाया था, लेकर नगर की ओर चल दिया।

ज़रा-सी देर में यह खबर चारों ओर फैल गई कि जंगल में रहने वाला तपस्वी अपनी सूनी कुटिया को छोड़कर फिर शहर आ रहा है और लोग उस दुर्लभ और आश्चर्यजनक दृश्य को देखने के लिए इकट्ठे होने लगे, यद्यपि उनमें से बहुतेरों को यह भय हो रहा था कि भगवान के सामने इस आदमी का यों चला आना कहीं कोई अनिष्ट न करे! दोनों ओर भक्ति-भाव से खड़े नर-नारियों के बीच से विराट गुजरा और उसने गंभीर मुस्कान से, जो कि प्रायः उसके होंठों पर खेलती रहती थी, दर्शकों का अभिवादन करने का प्रयत्न किया, लेकिन पहली बार उसने अनुभव किया कि अब मुस्कराना उसके लिए असंभव है। उसकी आँखें गंभीर बनी रहीं और होंठ बन्द रहे।

अन्त में वह महल में पहुंचा। मंत्रणा का समय बीत चुका था और महाराजा अकेले थे। विराट अन्दर गया। आगंतुक का आलिंगन करने के लिए महाराजा उठ खड़े हुए, लेकिन विराट ने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया और याचना के रूप में

उनकी पोशाक के छोर का स्पर्श किया।

महाराजा ने कहा, "तुम्हारे मुंह से शब्दों के निकलने के पहले ही मैं तुम्हारी प्रार्थना को स्वीकार करता हूं। मेरे लिए यह गौरव की बात है कि मेरे पास एक पावन पुरुष की सेवा और संत की सहायता करने के साधन हैं।"

"मुझे संत मत कहिए।" विराट ने उत्तर दिया, "क्योंकि मैंने सही रास्ते का अनुसरण नहीं किया। अब तक मैं एक चक्र में भटक रहा था और अब मैं फिर एक याचक के रूप में आपके सामने खड़ा हूं। मैं पाप से छुटकारा चाहता था और इसके लिए मैं सब तरह के कर्म से बचा, लेकिन मैं भ्रम में फंस गया था, जिसका जाल आदमियों को फंसाने के लिए सब जगह फैला है।"

"मैं तुम्हारी बात का यकीन नहीं कर सकता।" महाराजा ने कहा, "आदमियों की संगति से तो तुम बचे रहे, फिर उन्हें हानि कैसे पहुंचा सकते थे और जब तुम्हारा जीवन भगवान की सेवा के लिए समर्पित था तो तुम पाप कैसे कर सकते थे!"

"मैंने जान-बूझकर भूल नहीं की। मैं पाप से दूर भाग गया। लेकिन हमारे पैर तो धरती से बंधे हैं और हमारे कर्म सनातन नियमों के बंधन में जकड़े हैं। निष्कर्म स्वयं में कर्म है। अपने उस अमर भाई की आंखों से मैं बच नहीं सका, जिनका हमारे कार्यों पर हमारी इच्छा के विरुद्ध भी प्रभाव पड़ता है, चाहे वे कार्य भले हों या बुरे। लेकिन मैंने तो एक बार नहीं, अनेक बार अपराध किया है, क्योंकि मैं परमात्मा की शरण में भागा और लोगों की सेवा करने से इन्कार कर दिया। मैं तो निकम्मा था, क्योंकि मैंने केवल अपने ही जीवन का पोषण किया, और किसी की सेवा नहीं की। अब मैं पुनः सेवा करना चाहता हूं।"

"विराट, तुम्हारे शब्द मुझे बड़े अजीव-लगते हैं और मेरी समझ से परे हैं। मुझे यह बताओ कि तुम चाहते क्या हो, जिसकी कि मैं पूर्ति करूं ?"

"अपनी इच्छा को अब मैं स्वतंत्र नहीं रखना चाहता। स्वतन्त्र आदमी स्वतन्त्र नहीं है और जो निष्क्रिय है, वह पाप से नहीं वच पाता। जो सेवा करता है, जो अपनी इच्छा को अपने हाथ नहीं रखता, जो अपनी सारी शक्ति काम में लगाये रखता है और जो बिना सवाल किये कर्म में लीन रहता है, वही स्वतंत्र है। कार्य में जुटे रहना हमारा धर्म है, उसका आदि और उसका अन्त, उसका कारण और प्रभाव, परमात्मा के अधीन है। मेरी जो इच्छा है, उससे मुक्त कर दीजिए, क्योंकि सब जगह अपनी इच्छा चलाने से अव्यवस्था पैदा होती है। पूरी तौर पर सेवा करना ही बुद्धिमानी है।"

"तुम्हारी बात मेरी समझ में नहीं आ सकती। तुम कहते हो कि मुझे स्वतंत्र कर दो और साथ ही और उसी क्षण कहते हो कि मुझे काम दो। इससे तो यही अर्थ निकलता है कि वही आदमी स्वतन्त्र है, जो दूसरों की सेवा करता है, जबकि वह आदमी, जो कि सेवा करता है, स्वतन्त्र नहीं है। यह बात मेरी समझ से वाहर है।"

"महाराज, यह ठीक ही है कि आप अपने हृदय में इस बात को नहीं समझ सकते। यदि आप समझ जायं तो फिर आप महाराजा कैसे रह सकते हैं और किस प्रकार दूसरों को आज्ञा दे सकते हैं!"

क्रोध से महाराजा का चेहरा फक पड़ गया। बोले "तो तुम्हारे कहने का मतलब यह है कि परमात्मा की निगाह में दास की अपेक्षा महाराजा छोटी चीज है ?"

"परमात्मा की निगाह में कोई किसी से छोटा नहीं है और न कोई किसी से बड़ा है। जो सेवा करता है और विना सवाल किये अपनी इच्छा को समर्पित कर देता है, वही जिम्मेदारी से अपने को मुक्त कर लेता है और परमात्मा को उसे सौंप देता है। लेकिन जो इच्छा करता है और सोचता है कि अपने ज्ञान से वह विरोध को जीत लेगा, वह लालच के चंगुल में फंस जाता है और पाप करने लगता है।"

महाराजा का चेहरा और भी स्याह हो गया। वोले "तब सब सेवाएं एक-सी हैं और परमात्मा और आदमी की निगाह में छोटी-वड़ी सेवाएँ कोई नहीं हैं?"

"यह हो सकता है कि आदमी की निगाह में एक सेवा दूसरी से वड़ी दिखाई दे, लेकिन परमात्मा की निगाह में सब सेवाएं समान हैं।"

महाराजा विराट की ओर देर तक संजीदा होकर देखते रहे। उनके अभिमान को भारी धक्का लगा। जव उन्होंने उस थके चेहरे और झुर्रियों-भरे माथे पर लहराते सफेद वालों को एक वार फिर देखा तो उन्हें ऐसा लगा कि यह बुड्ढा आदमी सठिया गया है। इस वात की परीक्षा करने के लिए उन्होंने मज़ाक में पूछा, "तुम मेरे महल के कुत्तों का संरक्षक वनना पसंद करोगे?"

विराट ने स्वीकृति में सिर झुकाया और कृतज्ञता-प्रकाशन के लिए सिंहासन का चुम्बन किया।

११/

उस दिन से वह बूढ़ा व्यक्ति, जिसकी देशभर में चार गुणों के लिए ख्याति थी, महल के निकट कुत्तेघर के कुत्तों का संरक्षक होकर नौकर-चाकरों की कोठरियों में रहने लगा।

उसके बेटे उसके कारण लज्जित थे। जब उन्हें उसके ठिकाने के पास से होकर निकलना होता तो वे लंबा चक्कर काटकर जाते, क्योंकि वे उसका सामना करने से बचना चाहते थे और दूसरों के आगे यह स्वीकार नहीं करना चाहते थे कि वह उनका पिता है।

पुजारी उसे निकम्मा समझकर विमुख हो गये।

विराट वहां एक नौकर के रूप में बसने के लिए आया था। कुत्तों की डोरी पकड़कर उन्हें घुमाने ले जाता। कुछ दिन तक सामान्य जन उस बुड्ढे को, जो कभी महाराजा का खास आदमी रहा था, देखकर खड़े हो जाते थे और टकटकी लगाकर उसकी ओर देखते थे, लेकिन विराट इन दर्शकों की परवा नहीं करता था। इसलिए थोड़े समय में वे भी उदासीन हो गये और विराट के बारे में उन्होंने सोचना ही छोड़ दिया।

विराट ईमानदारी के साथ सवेरे से लेकर शाम तक काम में जुटा रहता। कुत्तों के पट्टों को धोता, उनके लबादों को साफ करता, उनके लिए खाना लाता, उनके आराम करने के लिए जगह ठीक करता और उनका पेशाब और टट्टी साफ करता।

कुछ ही दिनों में महल के और लोगों की अपेक्षा कुत्ते उसे कहीं अधिक प्यार करने लगे। इससे उसके हृदय को बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। उसका वृद्ध और झुरियों से भरा मुंह, जो बहुत कम बोलता था, कुत्तों को प्रसन्न देखकर मुस्करा उठता था।

कई वर्ष इसी प्रकार आनन्दपूर्वक बीते। उनमें कोई विशेष घटना नहीं हुई। हां, इस बीच महाराजा की मृत्यु हो गई। दूसरा नया राजा गद्दी पर बैठा, जो विराट को चीन्हता तक नहीं था और जिसने एक बार विराट के एक छड़ी जमा दी, क्योंकि जब वह जा रहा था, एक कुत्ता उसे देखकर भौंक उठा था। एक दिन वह भी आया जबकि विराट के सब साथी-संगी उसे भूल गये।

जब विराट की जीवन-यात्रा समाप्त हुई और उसका शव नौकर-चाकरों की श्मशान-भूमि में जलाया गया तो उसकी याद करनेवाला उस समय कोई भी नहीं था। यह वह आदमी था, जिसकी कीर्ति कभी सारे देश में व्याप्त थी और जिसकी चार गुणों के लिए सर्वत्र प्रशंसा होती थी!

उसके बेटे अलग रहे और कोई भी पुजारी अन्त्येष्ठि-संस्कार कराने नहीं आया। दो दिन और दो रात कुत्ते बेशक भौंके, लेकिन वे भी अपने स्वामी को, उस विराट को भूल गये, जिसके नाम का विजेताओं के इतिहास में कोई उल्लेख नहीं है और न संतों के ग्रंथों में ही कहीं एक शब्द उसके बारे में देखने में आता है।

❋

संरक्षिका

१/

दो लड़कियां अपने कमरे में अकेली थीं। रोशनी गुलकर दी गई थी। दोनों बिस्तरों से उठती धुंधली टिमटिमाहट को छोड़कर पूरी तरह अन्धेरा फैला था। दोनों लड़कियाँ इतने धीमे सांस ले रही थीं कि लगता था, सो रही हैं।

"सुनो!" एक बिस्तर से अचकचाती फुसफुसाहट हुई। बारह साल की लड़की की वह आवाज थी।

"क्या है?" उसकी बहन ने पूछा। वह उससे एक साल बड़ी थी।

"मुझे बड़ी खुशी है कि तुम अभी जग रही हो। मुझे तुमको कुछ बताना है।"

शब्दों में किसी ने जवाब नहीं दिया। महज दूसरे बिस्तर से कुछ सरसराहट हुई। बड़ी लड़की उठकर बैठ गई और इंतजार करने लगी। धुंधली रोशनी में उसकी आँखें चमक रही थीं।

"देखो, मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूं। लेकिन पहले यह तो बताओ कि क्या तुमने हाल ही में मिस मैन के व्यवहार में कुछ अजीब-सी बात देखी है?"

"हाँ!" दूसरी ने पल-भर खामोश रहने के बाद कहा, "कोई-न-कोई बात है, पर मैं नहीं जानती कि क्या है। वह पहले जैसी अब कठोर नहीं है। पिछले दो दिनों से मैंने स्कूल का अपना काम नहीं किया, उन्होंने इसके लिए मुझे झिड़का

नहीं। पता नहीं, क्या हो गया है ! अब वह हमारे बारे में परखा करती दिखाई नहीं देतीं। वह अकेली बैठी रहती हैं। पहले हमारे साथ खेल में शामिल हुआ करती थीं, अब नहीं होतीं।''

''मेरा ख्याल है कि वह दुःखी हैं और अपने दुःख को जाहिर न होने देने की कोशिश करती हैं। अब वह पियानो भी नहीं बजातीं।''

थोड़ी देर खामोशी रही, फिर बड़ी बोली, ''तुमने कहा था कि तुम्हारे पास बताने को कोई बात है।''

''हाँ, है; लेकिन तुम उसे अपने तक ही रखोगी न ! माँ से या अपनी दोस्त लोट्टी से एक शब्द भी नहीं कहोगी।''

''बेशक, नहीं कहूंगी।'' दूसरी लड़की ने तुनक कर कहा, ''अब आगे बोलो।''

''देखो, अपने बिस्तर पर लेट जाने के बाद अचानक मेरे दिमाग में आया कि मैंने मिस मैन से 'गुड नाइट' (शुभरात्रि) नहीं कहा। इसलिए बिना जूते पहनने की चिन्ता किये मैं दबे पाँव उनके कमरे की तरफ गई। मेरा मतलब था कि मैं अचानक पहुंच कर उन्हें चौंका दूँगी। मैंने उनके कमरे का दरवाजा धीरे से खोला। थोड़ी देर ऐसा लगा कि वह वहाँ नहीं हैं। बत्ती जल रही थी, पर वह मुझे दिखाई नहीं दीं। फिर अकस्मात मुझे सुनाई दिया कि कोई सिसक रहा है। मैं एकदम डर गई। मैंने देखा कि वह कपड़े पहने अपने बिस्तर में पड़ी हैं और उनका सिर तकियों में दबा है। वह इतनी डरावनी तरह से सिसक रही थीं कि मुझे बड़ा विचित्र लगा, पर उन्होंने मुझे देखा नहीं। मैं चुपचाप कमरे से निकल आई और जितना धीरे से दरवाजा बन्द कर सकती थी, कर दिया। क्षण भर के लिए मैं बाहर खड़ी रही, क्योंकि मेरे पैरों ने चलने से जवाब दे दिया था।

दरवाजे से ग्रब भी मुझे उनकी सिसकी सुनाई पड़ रही थी। इसके बाद मैं चली ग्राई ।"

कुछ देर तक दोनों में से कोई नहीं बोला। फिर लम्बी सांस खींचकर बड़ी ने कहा, "बेचारी मिस मैन !" उसके बाद फिर खामोशी छा गई ।

"भगवान जाने, वह किसलिए रो रही थीं !" छोटी लड़की ने बात ग्रागे बढ़ाई, "इधर उनके साथ कोई झगड़ा तो हुग्रा नहीं है ग्रौर न माँ ने ही उनसे कहा-सुनी की है, जैसाकि वह करती रहती हैं ! मुझे यकीन है कि हमने भी उन्हें हैरान नहीं किया है। तब उनके रोने का कारण क्या हो सकता है ?"

"मेरा ख्याल है कि मैं इसका ग्रंदाज कर सकती हूं।" बड़ी ने कहा।

"ग्रच्छा, तो बताग्रो ।"

उसने फौरन जवाब नहीं दिया, कुछ रुककर बोली, "मेरा विश्वास है कि वह किसी को प्रेम करती हैं।"

"प्रेम !" छोटी ने ग्रातुर होकर कहा, "प्रेम ! किससे ?"

"क्या तुम्हारा ध्यान नहीं गया है ?"

"तुम्हारा मतलब ग्रोट्टो से तो नहीं है ?"

"हां, उसी से है। वह उन्हें प्रेम करता है। वह पिछले तीन साल से हमारे साथ रह रहा है; लेकिन इधर के दो या तीन महीनों को छोड़कर वह उन सालों में हमारे साथ घूमने नहीं ग्राया। ग्रब वह एक दिन का भी नागा नहीं करता। मिस मैन के ग्राने तक वह हममें से किसी की तरफ देखता नहीं था। ग्रब देखो, वह हमेशा इधर-से-उधर चक्कर काटता है। जब-जब हम बाहर जाती हैं, पार्क में, बगीचों में या जहाँ भी मिस मैन हमें ले जाती हैं, वहीं वह दीख पड़ता है। तुमने भी तो इस चीज को देखा होगा।"

"हां, मैंने देखा तो था," छोटी ने जवाब दिया, "मैंने बस यह सोचा. . ."

उसने अपना वाक्य पूरा नहीं किया।

"अरे, मैं भी इस बात को तूल नहीं देना चाहती। परन्तु कुछ समय बाद मुझे विश्वास हो गया कि वह हमें अपने स्वार्थ के लिए निमित्त बना रहा था।"

बहुत देर तक चुप्पी रही। लड़कियाँ इस मसले के बारे में सोच रही थीं। छोटी ने बातचीत का सूत्र जोड़ा। बोली, "लेकिन अगर ऐसा है तो वह रोती क्यों हैं? ओट्टो उन्हें बेहद चाहता है। मैं हमेशा सोचा करती हूं कि किसी को प्यार करना कितने आनन्द की बात होगी।"

"ऐसा ही मैं भी सोचती हूं।" बड़ी ने इस ढंग से कहा, जैसे सपना देख रही हो, "मैं इससे कुछ समझ नहीं पाती।"

एक बार फिर उनींदी आवाज में उन्होंने कहा, "ओफ, बेचारी मिस मैन!"

इस तरह उस रात के लिए उनकी बातचीत खत्म हो गई।

२।

अगले दिन उन्होंने सवेरे उस बारे में चर्चा नहीं की, लेकिन उन्हें पता था कि एक-दूसरे के दिमाग में वही बात चक्कर काट रही है। वे अर्थपूर्ण दृष्टि से एक-दूसरे को देख ही नहीं रही थीं, बल्कि जब-जब उनकी निगाह संरक्षिका पर जमती थी, वे एक-दूसरे से आँखों-ही-आंखों में अपनी बात कह देती थीं। खाने के समय उन्होंने अपने चचेरे भाई ओट्टो के बारे में ऐसा दिखाया, मानो वह कोई अजनबी हो। वे उससे बोली नहीं; बल्कि उस पर यह जानने की कोशिश करते हुए एक उड़ती नजर डाली कि मिस मैन के साथ उसने कहीं चुपचाप कुछ सांठ-गांठ तो नहीं कर रखी है। अपने इस मनोरंजन में उनकी दिलचस्पी गहरी नहीं थी, क्योंकि वे इस तात्कालिक पहेली के अलावा कुछ सोच-समझ नहीं पाती थीं। शाम को उदासीनता दिखाते हुए एक ने दूसरी से पूछा, "क्या तुमने आज और कुछ देखा?"

"नहीं।" दूसरी बहन ने संक्षेप में उत्तर दिया।

असल में इस मसले पर चर्चा करते उन्हें डर लगता था। इस तरह मामला कई दिन तक चलता रहा। दोनों लड़कियां खामोशी से चीजों को देख रही थीं, दिमागों में उनके परेशानी थी और वे अनुभव कर रही थीं कि अब भेद उनके सामने खुलने ही वाला है।

आखिर खाने के वक्त छोटी लड़की ने देखा कि मिस मैन ने ओट्टो को ऐसे इशारा किया कि किसी को पता न चले और ओट्टो ने जवाब में सिर हिला दिया। उत्तेजना में कांपते हुए

छोटी लड़की ने मेज के नीचे धीरे से बड़ी के पैर मारा। बड़ी ने उत्सुकता से छोटी की तरफ देखा। छोटी ने अर्थ-भरे ढंग से आँख के इशारे से जवाब दे दिया। बाकी के खाने के दौरान दोनों बेचैन रहीं। खाने के बाद मिस मैन ने लड़कियों से कहा, "स्कूल के कमरे में जाओ और कुछ काम करो। मेरा सिर दुःख रहा है। मैं आधा घंटा लेटूँगी।"

ज्योंही लड़कियों को एकांत मिला, छोटी बोली, "देख लेना, ओट्टो उनके कमरे में जायगा।"

"बेशक," दूसरी ने कहा, "इसीलिए तो उन्होंने हमें यहां भेज दिया है।"

"हमें दरवाजे के बाहर से सुनना चाहिए।"

"लेकिन मान लो कि कोई आ गया तो ?"

"कौन आवेगा ?"

"माँ।"

"यह बड़ी भयंकर बात होगी।" छोटी ने चौंककर कहा।

"देखो, मैं सुनूँगी और तुम रास्ते की चौकसी करोगी।"

छोटी बोली, "लेकिन तुम मुझे सारी बातें नहीं बताओगी।"

"नहीं, मैं सब बातें बता दूँगी।"

"ईमान से कहती हो ?"

"हां, ईमान से कहती हूं। अगर तुम्हें किसी के आने की आहट सुनाई दे तो खाँस देना।"

वे गलियारे में प्रतीक्षा करने लगीं। मारे घबराहट के उनके दिल धड़क रहे थे। आगे क्या होनेवाला है ? उन्हें पैरों की चाप सुनाई दी। वे स्कूल के एक अंधेरे कमरे में चुपचाप छिप गईं। हाँ, वह ओट्टो ही था। वह मिस मैन के कमरे में चला गया और दरवाजा बन्द कर लिया। बड़ी लड़की अपनी जगह पर फट से पहुंच गई और चाबी के सूराख पर कान लगाकर

सुनने लगी। उसे साँस लेने की भी हिम्मत नहीं हो रही थी। छोटी ईर्ष्या से उसे देख रही थी। उसकी उत्तेजना इतनी बढ़ी कि वह दबे पाँव दरवाजे पर पहुंची, लेकिन उसकी बहन ने उसे धकेल दिया और गुस्से में भरकर इशारा किया कि वह गलियारे के दूसरे छोर पर निगाह रक्खे। इस प्रकार वे चंद मिनटों तक राह देखती रहीं, लेकिन छोटी लड़की को तो वह समय युग जैसा लगा। वह बेहद अधीर हो रही थी और इस तरह चुल-बुला, रही थी मानो दहकते कोयलों पर खड़ी हो। उसे आंसू रोकना मुश्किल हो रहा था, क्योंकि उसकी वहन सबकुछ सुन रही थी। आखिर शोर हुआ। वह चौंक उठी और उसने खाँसा। दोनों लड़कियां अपने क्लास के कमरे में दौड़ गईं। थोड़ा वक्त गुजरने पर वे बोलने की हालत में हुईं। तब छोटी ने उत्सुक होकर कहा, "अब तुम मुझे सारी बातें बताओ।"

बड़ी कुछ हैरान दिखाई दे रही थी। वह ऐसे बोली, जैसे अपने से ही बातें कर रही हो, "मेरी कुछ समझ में नहीं आता।"

"क्या ?"

"मामला बड़ा विलक्षण है।"

"क्या ? क्या ?" दूसरी ने रोष में भरकर कहा।

बड़ी ने कोशिश करके कहा, "बड़ी अजीब-सी चीज है। मैंने जो सोचा था, उससे बिल्कुल दूसरी। मेरा ख्याल है कि जब ओट्टो कमरे में पहुंचा तो उसकी इच्छा रही होगी कि मिस मैन के गले में बांह डाले और उन्हें प्यार करे, क्योंकि मिस मैन ने कहा, 'ठहरो, मुझे तुमसे कुछ गंभीर बात कहनी है।' मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था, क्योंकि चाबी सूराख में लगी थी, लेकिन मैं सुन साफ-साफ पा रही थी। 'क्या बात है?' ओट्टो ने ऐसी आवाज में पूछा, जैसी पहले मैंने कभी उसके मुंह से नहीं

सुनी थी। तुम जानती हो, आमतौर पर वह कैसे बोलता है—बड़े जोर से और गाल फुलाकर, लेकिन मुझे विश्वास है कि वह उस समय डरा हुआ था। मिस मैन ने देखा होगा कि वह उनके साथ छल कर रहा है, क्योंकि उन्होंने बस इतना कहा, 'मेरा ख्याल है कि तुम्हें अच्छी तरह पता है'—'नहीं पता'! —'अगर ऐसा है तो'—उन्होंने दु:खभरी आवाज में कहा, 'तुम मुझसे दूर क्यों खिच गए हो ? एक हफ्ता हो गया, तुम मुझसे बोले तक नहीं हो, जहाँ तक होता है, तुम मुझसे बचते हो; लड़कियों के साथ भी नहीं होते; पार्क में हमसे मिलने नहीं आते। क्या तुमने अचानक मेरी चिन्ता करना छोड़ दिया है ? ओह, तुम अच्छी तरह जानते हो कि मुझसे इस तरह क्यों मुंह मोड़ रहे हो !' थोड़ी देर तक कोई जवाब नहीं दिया। फिर उसने कहा, 'यकीनन तुम जानती हो कि मेरे इम्तहान कितने नजदीक आ गए हैं। अपने काम को छोड़कर मेरे पास और किसी भी चीज के लिए अब समय नहीं है। मैं क्या कर सकता हूं ?' मिस मैन रोने लगीं। सिसकते हुए उन्होंने धीरे से कहा, 'ओट्टो, सच बोलो, मैंने ऐसा क्या किया है, जो तुम मेरे साथ इस तरह का सलूक कर रहे हो ? मैंने तुमसे कुछ मांगा नहीं है, लेकिन बात तो हमें खुलकर करनी ही चाहिए। तुम्हारी भाव-भंगिमा से मुझे साफ दिखाई देता है कि तुम सबकुछ जानते हो . . ."

लड़की कांपने लगी। वह अपना वाक्य भी पूरा नहीं कर पाई। उसकी बात सुनने वाली लड़की और पास आ गई। उसने पूछा, "किस चीज के बारे में ?"

"हमारे बच्चे के बारे में।"

"उनके बच्चे के बारे में !" छोटी ने कहा, "बच्चा ! नामुमकिन !"

"यही उन्होंने कहा।"

"तुमने ठीक से नहीं सुना होगा।"

"मैंने सुना, मुझे पूरा भरोसा है कि मैंने ठीक ही सुना। ओट्टो ने फिर कहा, 'हमारा बच्चा!' थोड़ा रुककर मिस मैन बोलीं, 'बताओ, अब क्या हो? फिर'..."

"हाँ, क्या हुआ?"

"तभी तुमने खाँसा और मैं वहाँ से हट गई।"

छोटी लड़की बुरी तरह उलझन में पड़ गई। "लेकिन उनके बच्चा कहां से आया? बच्चा है कहाँ?"

"जितना तुम समझती हो, उससे ज्यादा मैं नहीं समझती।"

"शायद उसके घर पर होगा। बेशक, मां उसे यहाँ नहीं लाने देंगी। उनके दुःखी होने की यही वजह है।"

"ओह, तब वे ओट्टो को नहीं जानतीं।"

लड़कियाँ बेबसी से सोचने लगीं। तब छोटी ने कहा, "बच्चा! असंभव! उनके बच्चा हो कैसे सकता है? उनकी शादी ही नहीं हुई। जिनकी शादी हो जाती है, उन्हीं के तो बच्चे होते हैं।"

"शायद उनकी शादी हो चुकी है।"

"मूर्खता की बात मत करो। उन्होंने ओट्टो से कभी ब्याह नहीं किया।"

"तब फिर?"

दोनों ने एक दूसरे को आँखें गड़ा कर देखा।

"बेचारी मिस मैन!" उनमें से एक ने अफसोस के साथ कहा।

घुमा-फिराकर वे हमेशा इसी सम्बोधन पर आ जाती थीं, जैसे वह दया की निशानी हो। लेकिन उनकी उत्सुकता हर बार भड़क उठती थी।

"तुम क्या सोचती हो, वह लड़का है या लड़की? हे

भगवान !"

"मैं कैसे बता सकती हूं ?"

"अगर मैं चतुराई के साथ उन्हीं से पूछ लूँ तो ?"

"ओह, चुप हो जाओ।"

"क्यों, पूछने में हर्ज क्या है ? हमारे लिए तो वे कितनी भली हैं।"

"इससे फायदा क्या होगा ! वे लोग हमें ऐसी बातें कभी नहीं बताते। अगर वे इस बारे में बातें करते भी होते हैं और हम कमरे में आ जाती हैं तो वे फौरन चुप हो जाते हैं और हमसे इधर-उधर की बातें करने लगते हैं, जैसे हम अभी दूध-पीते बच्चे हों, हालाँकि मैं अब तेरह की हूं। उनसे पूछने से लाभ क्या है, फालतू बात है !"

"लेकिन मैं जानना चाहती हूं।"

"बेशक, जानना तो मैं भी चाहती हूं।"

"मेरे लिए हैरानी इस बात की है कि ओट्टो ने ऐसा दिखाया कि जैसे उसे कुछ पता ही न हो। लोगों को मालूम होना ही चाहिए कि उनके बच्चा है, जैसे कि वे जानते हैं कि वे उसके पिता और माता हैं।"

"ओह ! वह तो महज दिखावा कर रहा था। वह हमेशा ऐसा ही करता है।"

"लेकिन इस तरह की चीज के लिए नहीं। उसे जब हमारी टाँग खींचनी होती है तब ऐसा करता है।"

उसी समय संरक्षिका आ गईं और उनकी बातचीत बीच में ही रुक गई। लड़कियों ने ऐसा दिखाया कि वे पढ़ाई में बड़ी मेहनत से जुटी हों। परन्तु उनसे छिपा न रहा कि मिस मैन की आंखें लाल हो रही थीं और उनकी आवाज में भावुकता दिखाई

दे रही थी। लड़कियां एकदम चुपचाप बैठी रहीं ग्रौर उनके प्रति ग्रादर दिखाती रहीं।

'उनके एक बच्चा है,' यही बात उनके दिमाग में घूमती रही, "इसीलिए वे इतनी दुःखी हैं।" लेकिन ग्रनजाने उन पर भी तो दुःख की छाया सवार हो गई थी।

३/

अगले दिन रात के खाने के समय उन्हें बड़ी डरावनी खबर मिली। ओट्टो जा रहा था। उसने अपने चाचा से कह दिया था कि इम्तहान से पहले उसे और ज्यादा मेहनत करनी होगी और कि उस घर में बहुत-सी बाधाएं हैं। दो महीने के लिए वह दूसरी जगह जा रहा है।

लड़कियों का भावावेग से बुरा हाल था। उन्हें यकीन था कि उनके भाई के जाने का सम्बन्ध पिछले दिन की बातचीत से अवश्य रहा होगा। अपनी सहज-बुद्धि से उन्होंने समझ लिया था कि यह कायर का पलायन है। जब ओट्टो उनसे विदा लेने आया तो उन्होंने जानबूझ कर अशिष्टता का वर्ताव किया और उसकी ओर पीठ कर ली। फिर देखती रहीं कि मिस मैन से वह कैसे विदाई लेता है। मिस मैन ने शान्त-भाव से उससे हाथ मिलाया, लेकिन उनके होंठ काँप रहे थे।

इन दिनों वे लड़कियां कुछ और ही तरह की हो गई थीं। वे शायद ही हंसती थीं, किसी भी चीज में रस नहीं लेती थीं, आँखें उनकी उदास रहती थीं। वे इधर-उधर बेचैनी से भटकती थीं और बड़ों पर से उनका विश्वास उठ गया था। उन्हें शक हो गया था कि उनकी मामूली-से-मामूली बात के पीछे उनको धोखा देने की इच्छा है। वे छाया की तरह यहाँ-वहाँ जाती थीं। वे दरवाजों के पीछे कान लगाकर इस उत्सुकता से सुनती थीं कि उस आवरण को हटा दें, जो उस भेद को छिपाये हुए था, अथवा कम-से-कम उस जाल में से उन्हें असली दुनिया

की झलक तो मिल जाय। बचपन का विश्वास, उन्हें तृप्ति देने वाला अज्ञान काफूर हो गया था। इसके अलावा वे लगातार उम्मीद कर रही थीं कि कुछ नई बात सामने आवेगी और उन्हें डर था कि कहीं वह बात उनसे चूक न जाय। उनके चारों ओर जो कपट का वातावरण था, उसने उन्हें कपटी बना दिया था। जब कभी उनके माता-पिता पास होते, वे ऐसा दिखातीं कि वे अपने काम में बहुत ही मशगूल हैं। बड़ों की दुनिया के विरुद्ध एक सामान्य ध्येय बन जाने से वे एक-दूसरे के और भी नजदीक आ गई थीं। जब कभी अज्ञानता और बेबसी की भावना उन्हें जकड़ लेती थी तो अक्सर राहत पाने के लिए वे एक-दूसरे को आलिंगन में बाँध लेती थीं। कभी-कभी वे आंसू बहाने लगती थीं। बिना किसी जाहिरा वजह के उनकी जिंदगी बड़े संकट की अवस्था में पड़ गई थी।

उनके सामने जो बहुत-सी मुसीबतें थीं, उनमें सबसे बुरी एक दिखाई देती थी। उन्होंने मजबूती से, एक-दूसरे से बिना सलाह किए, तय कर लिया था कि मिस मैन को, जो बहुत दुःखी थीं, कम-से-कम हैरान करेंगी। वे बहुत ही मेहनती थीं, पढ़ाई में एक-दूसरे की मदद करती थीं, हमेशा शांत रहती थीं और अच्छा व्यवहार करती थीं, उनकी शिक्षिका क्या चाहती है, इसे भांप लेने की कोशिश करती थीं। लेकिन संरक्षिका इस बात की ओर ध्यान देती दिखाई नहीं देती थीं और इससे उन्हें सबसे ज्यादा चोट पहुंचती थी। अब मिस मैन एकदम बदल गई थीं। जब कभी कोई लड़की उनकी बात करती थी तो ऐसा लगता था, जैसे वह सोते से जगी हों और वह ऐसे देखती थीं, मानो उनकी आंखें कहीं दूर कुछ खोज रही हों। वह घंटों गुमसुम बैठी रहती थीं और लड़कियां वहाँ से दबे पांव गुजरती थीं, जिससे उन्हें कोई बाधा न पहुंचे, क्योंकि उन्हें ख्याल होता

था कि वे अपने अनुपस्थित बच्चे के बारे में सोच रही हैं। उनके अन्दर की स्त्री जाग उठी थी और वे संरक्षिका को, जो उनके प्रति अब बड़ी दयालु हो गई थीं, पहले की निस्बत कहीं ज्यादा चाहने लगी थीं। हंसमुख मिस मैन, जो कभी-कभी जरूरत से ज्यादा हंसी-मजाक में आगे बढ़ जाती थीं, अब विचारों में डूबी रहती थीं और उदार बन गई थीं, और लड़कियां अनुभव करती थीं कि उनके सारे काम उनकी छिपी हुई पीड़ा को व्यक्त करते हैं। उन्होंने उनको कभी रोते हुए नहीं देखा, लेकिन उनके नेत्र अक्सर लाल रहते थे। जाहिर था कि वे अपनी मुसीबतों को अपने तक ही सीमित रखना चाहती थीं और लड़कियों को इस बात का दुःख था कि उनकी वे मदद नहीं कर पातीं।

एक दिन, जब संरक्षिका अपनी आंखें पोंछने के लिए खिड़की की तरफ चली गईं तो छोटी लड़की ने हिम्मत करके उनका हाथ पकड़ लिया और बोली, "मिस मैन, आप इतनी दुखी हैं। इसमें हमारा कुसूर तो नहीं है! क्यों?"

संरक्षिका ने प्यार से लड़की की ओर देखा, उसके बालों पर हाथ फेरा और जवाब दिया, "नहीं, बच्ची। इसमें तुम्हारा कोई कुसूर नहीं है।" उन्होंने नन्हीं बच्ची का माथा चूम लिया।

इस प्रकार लड़कियां बराबर टोह में थीं, और उनमें से किसी-न-किसी के अचानक बैठक में जाने पर एकाध शब्द ऐसा सुन पड़ता था, जो उसके कानों के लिए नहीं होता था। उसके माता-पिता फौरन बात का रुख बदल देते थे, लेकिन लड़की को इतना मसाला मिल जाता था कि वह उस पर सोचने लगती थी।

"हां, मेरे दिमाग में भी यही बात आई है। मां कह रही

थीं, "मुझे उससे बात करनी होगी।"

लड़की ने पहले तो खुद सोचा, फिर सलाह करने अपनी वहन के पास गई।

"तुम क्या सोचती हो, यह झगड़ा किसलिए है ?"

लेकिन रात को खाने के समय लड़कियों ने देखा कि उनके पिता और मां किस तरह संरक्षिका को जाँच रहे थे और फिर किस तरह अर्थपूर्ण दृष्टि से एक-दूसरे को देख रहे थे। खाने के बाद मां ने मिस मैन से कहा, "क्या तुम मेरे कमरे में आओगी? मुझे तुमसे कुछ कहना है।"

लड़कियां उत्तेजना से काँपने लगीं। कुछ घटना घटने जा रही थी। अबतक कान लगाना रोजमर्रा की बात हो गई थी। उन्हें अब इसमें कोई शर्म महसूस नहीं होती थी। उनके सामने एक ही विचार था कि उनसे जो छिपाया जा रहा था, वह उन्हें मालूम हो। ज्योंही मिस मैन कमरे में दाखिल हुई कि लड़कियां झट दरवाजे पर पहुंच गईं।

उन्होंने सुना; लेकिन जो कुछ उन्हें सुनाई पड़ा, वह यह था कि बातचीत बहुत धीमे-धीमे हो रही थी। आखिर क्या कुछ भी उनके पल्ले नहीं पड़ेगा ? तभी उन आवाजों में से एक आवाज कुछ ऊंची हुई। गुस्से में भरकर उनकी मां कह रही थीं, "क्या तुम मानती हो कि हम सब अंधे थे कि तुम्हारी हालत का हमें पता नहीं चलेगा ? इससे इस बात पर रोशनी पड़ती है कि संरक्षिका की तुम्हारी जिम्मेदारियों के प्रति तुम्हारा रुख क्या था। यह सोचकर मेरा दिल बैठता है कि मैंने अपनी लड़कियों की पढ़ाई को ऐसे हाथों में सौंपने पर भरोसा रखा। इसमें कोई शक नहीं कि तुमने अपने काम की बड़ी बेहयाई से उपेक्षा..."

संरक्षिका ने इसके विरोध में मुंह खोला, लेकिन वह धीमे

बोली, जिसे लड़कियाँ सुन नहीं पाईं।

"बहस, बहस ! हर चलती-फिरती औरत बहाने खोज लेता है। तुम जैसी औरत जो भी कोई सामने आता है, उसी के आगे बिना यह सोचे झुक जाती है कि उसका नतीजा क्या होगा। इसके लिए ईश्वर तुम्हें बख्शेगा नहीं। यह बड़ी भयंकर बात है कि तुम जैसी कुलटा संरक्षिका बने। लेकिन मुझे यकीन है कि तुम अपने मन में यह नहीं सोच रही होगी कि अब मैं तुम्हें एक भी दिन इस घर में रहने दूँगी !"

लड़कियां यह सुनकर कांपने लगीं। वे पूरी तरह नहीं समझ पाईं, परन्तु मां का लहजा उन्हें बड़ा भयावह लगा। उसका जवाब मिस मैन ने सुबकियों में दिया। लड़कियों की अपनी आंखों से आंसू बहने लगे। उनकी माँ पहले की निस्बत अब ज्यादा गुस्सा हो गई थीं।

"बस अब तुम यही कर सकती हो, रोओ, बिलखो ! तुम्हारे आँसू मुझ पर कोई असर नहीं डाल सकते। तुम जैसी के साथ मेरी कोई हमदर्दी नहीं है। तुम्हारा क्या होगा, इससे मुझे कोई सरोकार नहीं। बेशक, तुम जानती हो कि मदद के लिए तुम्हें किसका सहारा लेना चाहिए। यह तुम्हारा मामला है। मैं तो बस इतना जानती हूं कि तुम अब एक दिन भी मेरे घर में नहीं रहोगी।"

मिस मैन की सुबकियाँ ही मां की बातों का जवाब थीं। लड़कियों ने कभी किसी को इस तरह सुबकते नहीं देखा था। उनका यकीन था कि जो इतनी बुरी तरह रोता है, वह शायद कभी दोषी नहीं होता। उनकी मां थोड़ी देर चुप रहीं और फिर तलखी से बोलीं, "अच्छा, मुझे तुमसे यही कहना था। आज दोपहर को अपना सामान बांध लो और कल सवेरे अपनी तनख्वाह के लिए मेरे पास आओ। अब तुम जा सकती हो।"

लड़कियां दौड़कर अपने कमरे में चली गईं। अब क्या हो सकता था? इस आकस्मिक तूफान का मतलब क्या था? अन्धकार की उस बेला में उनके दिल में सच्चाई के प्रति संदेह होने लगा। पहली बार उनमें अपने माता-पिता के प्रति विद्रोह की भावना भर उठी।

"क्या मां का उनके साथ इस तरह बात करना भयंकर नहीं था?" बड़ी ने कहा।

छोटी इस तरह की खुली आलोचना से कुछ चौंक पड़ी और रुक-रुककर बोली, "लेकिन ..लेकिन...हमें पता नहीं कि मिस मैन ने क्या किया?"

"उन्होंने कोई भी बुरा काम नहीं किया, मुझे पक्का भरोसा है। मिस मैन कभी कोई गलत काम नहीं करेंगी। मां उन्हें इतनी अच्छी तरह नहीं जानतीं, जितनी अच्छी तरह हम जानती हैं।"

"मिस मैन जिस तरह रोईं, क्या वह दिल दहलाने वाला नहीं था? उससे मुझे बड़ा बुरा लगा।"

"तुम ठीक कहती हो, उनका रोना दिल दहलाने वाला ही था। लेकिन जिस तरह मां उन पर चिल्लाईं, वह तो बहुत ही दुःखी करने वाला था, बेहद दुःखी करने वाला।"

बोलते-बोलते गुस्से में उसने पैर पटका और उसकी आँखों में आँसू उमड़ आये।

उसी घड़ी मिस मैन वहां आईं। वह बुरी तरह क्लान्त दिखाई दे रही थीं।

"लड़कियों, आज दोपहर को मुझे बहुत काम करने को हैं। अगर मैं तुम्हें अकेला छोड़ दूं तो? मैं जानती हूं, तुम अच्छी तरह अपना काम करोगी। शाम को हम फिर एक साथ होंगे।"

इतना कहकर वह मुड़ीं और बिना लड़कियों की उदासी-भरी निगाह पर ध्यान दिये कमरे से बाहर चली गईं।

"तुमने देखा, उनकी आँखें कितनी लाल थीं ? मेरी समझ में बिल्कुल नहीं आता कि माँ उनके प्रति इतनी निर्दय कैसे हो सकती हैं ?"

"बेचारी मिस मैन !"

फिर वही विलाप। टूटी आवाज में, आँसुओं के बीच ! उस समय उनकी माँ ने पूछा कि क्या तुम लोग मेरे साथ घूमने चलोगी ?

"आज नहीं, माँ।"

बात असल में यह थी कि वे अपनी मां से डरी हुई थीं। उन्हें गुस्सा भी था, क्योंकि उन्होंने उनको यह नहीं बताया था कि वे मिस मैन को निकाल रही हैं। इसलिए अकेले रहना ही उनके मन के अनुकूल था। वे पिंजड़े में बंद अबाबील की तरह कमरे में चक्कर लगाती रहीं। झूठ और खामोशी के वातावरण से आहत होकर सोचती थीं कि मिस मैन के पास जायं और पूछें कि माजरा क्या है। कहें कि उनकी इच्छा है कि वे रहें और कि उनके विचार से मां ने उनके साथ घोर अन्याय किया है। पर उन्हें डर था कि इससे वे दुःखी होंगी। इसके अलावा उन्हें इस बात की शर्म भी तो थी कि वे उस मामले में कुछ कहें, जिसके बारे में उड़ती-उड़ती बातें उनके कानों में पड़ी थीं ?

कभी खत्म न होने वाली वह दोपहरी उन्हें अकेले में उदास होकर और कभी-कभी रोते और अपने दिमाग में उन बातों की याद करते बितानी पड़ी, जो उन्होंने बंद दरवाजे में से सुनी थीं—मां का बेरहमी से भरा गुस्सा और मिस मैन की निराशा-भरी सुबकियाँ !

शाम को संरक्षिका उनसे मिलने ग्राईं, पर सिर्फ 'गुड नाइट' कहने के लिए। जैसे ही वह कमरे से गईं, लड़कियों का मन हुग्रा कि खामोशी को तोड़ें; लेकिन वे एक शब्द भी नहीं बोल पाईं, मानो उनकी खामोश इच्छा ने उन्हें वापस बुला लिया हो, मिस मैन दरवाजे से लौटीं। उनकी ग्रांखें वात्सल्य से चमक रही थीं। उन्होंने दोनों लड़कियों को सीने से लगाया। उनका ऐसा करना था कि लड़कियां फूट पड़ीं ग्रौर रोने लगीं। मिस मैन ने उन्हें एक बार फिर चूमा ग्रौर तेज कदमों से चली गईं।

बच्चों के लिए यह बात साफ हो गई कि वह उनकी ग्रंतिम विदाई थी।

"ग्रब हम उन्हें कभी नहीं देख पायंगी।" सिसकते हुए एक ने कहा।

"मैं जानती हूं। कल जब हम स्कूल से लौटेंगी, वे जा चुकी होंगी।"

"शायद हम कुछ दिन बाद उनसे मिलने जा सकेंगी ? तब वह हमें बच्चे को दिखा देंगी।"

"हां, वह कितनी प्यारी हैं !"

"बेचारी मिस मैन !"

इस वाक्यांश में उनको ग्रपनी नियति की भविष्यवाणी दिखाई देती थी।

"मैं नहीं सोच पाती कि हम उनके बिना कैसे ग्रपना काम चला सकेंगी !"

"उनके जाने के बाद मैं तो दूसरी संरक्षिका को हर्गिज सहन नहीं कर सकूंगी।"

"न मैं ही सहन कर सकूँगी।"

"मिस मैन जैसी कभी कोई नहीं होंगी। इसके ग्रलावा..."

उसे ग्रपना वाक्य पूरा करने की हिम्मत नहीं हुई। स्त्रीत्व की अचेतन भावना ने उनके अंदर मिस मैन के लिए एक प्रकार का आदर-भाव भर दिया, खासतौर पर इसलिए कि उन्हें पता था कि उनके बच्चा है। यह बात बराबर उनके जहन में घुस गई थी और उन्हें बेहद परेशान कर रही थी।

"देखो।" एक ने कहा।

"बोलो।"

"मेरे दिमाग में एक विचार आया है। क्या हम मिस मैन के जाने से पहले कुछ ऐसा नहीं कर सकते, जो सचमुच उनको अच्छा लगे, जिससे उन्हें पता चले कि हम उन्हें कितना चाहती हैं और कि हम माँ जैसी नहीं हैं? क्या तुम इसमें मेरे साथ होगी?"

"जरूर।"

"तुम्हें पता है कि सफेद गुलाब उन्हें कितना पसन्द है। कल सवेरे हम जल्दी चलें और स्कूल जाने से पहले कुछ फूल खरीद लावें। उन्हें हम उनके कमरे में रख आवेंगे।"

"लेकिन कब?"

"स्कूल के बाद।"

"वह बेकार होगा। तबतक वह जा चुकी होंगी। देखो, नाश्ते के पहले, मैं तड़के ही निकल जाऊंगी और फूल ले आऊंगी। उसके बाद हम उनके पास ले जायंगे।"

"ठीक है। हमें बहुत जल्दी उठ जाना है।"

उन्होंने अपने पैसों के डिब्बे टटोले। एक बार फिर यह देखकर उन्हें खुशी हुई कि वे मिस मैन को यह बता सकेंगी कि वे उन्हें कितना प्यार करती हैं।

बड़े तड़के, गुलाब हाथ में लिये, लड़कियों ने मिस मैन का दरवाजा खटखटाया। कोई जवाब नहीं मिला। यह सोचकर कि वे सो रही होंगी, उन्होंने भीतर झांका। कमरा खाली था। बिस्तर पर कोई सोया ही नहीं था। मेज पर दो चिट्ठियाँ रखी थीं। लड़कियाँ भयभीत हो गईं। क्या हुग्रा ?

"मैं सीधी मां के पास जाऊंगी।" बड़ी ने कहा।

विद्रोह के स्वर में, बिना जरा भी डरे, उसने मां के पास जाकर पूछा, "मिस मैन कहां हैं ?"

"मेरे ख्याल से ग्रपने कमरे में होंगी।"

"उनके कमरे में कोई नहीं है। वे बिस्तर पर सोईं ही नहीं। जरूर ही रात को चली गईं। तुमने हमसे इस बारे में कुछ भी क्यों नहीं कहा ?"

मां ने उस चुनौतीभरे स्वर की ग्रोर ध्यान नहीं दिया। वह पीली पड़ गईं ग्रौर ग्रपने पति का सहारा लिया। पति मिस मैन के कमरे में गये।

वह वहां थोड़ी देर ठहरे। लड़कियां उदासीभरे गुस्से से ग्रपनी मां को घूर रही थीं। मां के लिए उनकी ग्रोर देखना मुश्किल हो रहा था।

उनके पिता वापस ग्राये। उनके हाथ में खुली चिट्ठी थी। माता-पिता ग्रपने कमरे में चले गये ग्रौर धीमी ग्रावाज में बात करने लगे। इस बार लड़कियाँ कोशिश करने ग्रौर जो कहा जा रहा था, उसे सुनने से डर रही थीं।

जब उनकी माँ बाहर आईं तो उन्होंने देखा कि वह रो रही हैं। वे उनसे सवाल करना चाहती थीं, लेकिन उन्होंने तेजी से कहा, "फौरन स्कूल जाओ, नहीं तो तुम्हें देर हो जायगी।"

उन्हें जाना पड़ा। वे बिना एक शब्द समझे घंटों क्लास में बैठी रहीं। फिर घर दौड़ीं। वहाँ एक भयंकर विचार सबके दिमाग पर छाया हुआ था। नौकरों तक की एक अजीब-सी निगाह थी। उनकी मां उनसे मिलने आईं और पहले से होशियारी के साथ तैयार किये हुए शब्दों में बोलीं, "बच्चो, अब तुम मिस मैन को कभी नहीं देख पाओगी। वह..."

वाक्य अधूरा छोड़ दिया गया। लड़कियों का चेहरा इतना तमतमाया और डरावना था कि मां झूठ नहीं बोल सकीं। वह मुड़ीं और अपने कमरे में जाकर शरण ली।

●

उस दोपहर को ओट्टो आया। दो चिट्ठियों में से एक उसके नाम थी। उसे बुलवाया गया था। वह पीला पड़ रहा था और बेचैन था। किसी ने उससे बात नहीं की। हर कोई उससे बचता रहा। दोनों लड़कियों को कमरे में एक कोने में हैरान बैठी देखकर वह उनके पास गया।

"हमारे पास मत आओ।" दोनों कठोरता से उसकी ओर देखकर चीखीं।

ओट्टो ने थोड़ी देर इधर-उधर पैर रखे, फिर अन्तर्धान हो गया। लड़कियों ने किसी से एक शब्द नहीं कहा, न वे एक-दूसरे से बोलीं। वे निरुद्देश्य एक कमरे से दूसरे कमरे में चक्कर लगाती रहीं। सामने पड़ जाने पर वे चुपचाप एक-दूसरे के आंसुओं से भीगे चेहरे देखती थीं। उन्हें अब सबकुछ पता चल गया था। वे समझ गई थीं कि उन्हें धोखा दिया गया है। वे

जान गई थीं कि लोग कितने कमीने हो सकते हैं। उनके दिल में अब अपने माता-पिता के लिए प्यार नहीं रहा था, न उनका उन पर विश्वास ही रह गया था। उनके मन में यह बात घर कर गई थी कि उन्हें अब कभी किसी का भरोसा नहीं करना चाहिए। जिंदगी का सारा बोझ उनके कमजोर छोटे कंधों के लिए बहुत भारी हो गया। उनका बेफिक्री से भरा सुखी बचपन अब पीछे छूट गया। अज्ञात भय से वे आक्रान्त थीं। जो कुछ हुआ, उसका पूरा महत्व अब भी उनकी समझ से बाहर था, फिर भी वे उसकी भीषण संभावनाओं से जूझ रही थीं। अपने सूने मन में वे एक-दूसरे के नजदीक आ गई थीं, लेकिन वह उनका मूक मिलन था; क्योंकि वे खामोशी की छाया को हटा नहीं पाती थीं। अपने बड़ों से उनका नाता एकदम टूट गया था। कोई भी उनसे कुछ कह-सुन नहीं सकता था, कारण कि उनकी आत्मा की पंखुड़िया बंद हो गई थीं--शायद सालों तक के लिए। उनके चारों ओर जो कुछ था, उस सबसे उनका युद्ध ठन गया था, क्योंकि जरा-से एक दिन में वे बड़ी हो गई थीं।

बहुत रात हो जाने पर जब वे अपने सोने के कमरे में अकेली थीं, उनके अन्दर बचपन के एकान्त का डर, मरी हुई स्त्री का आतंकित करने वाला डर, भयंकर संभावनाओं का डर, फिर से जाग उठा। बड़े जोर की सर्दी थी। दिमाग की गड़बड़ाई हालत में गरम करने वाले यंत्र को चालू करने का ध्यान नहीं रहा। वे दोनों एक ही बिस्तर में घुस गईं और एक-दूसरे को सहारा देने तथा गरमी पाने के लिए चिपट कर पड़ी रहीं। अब भी वे अपनी मुसीबत की चर्चा करने की हालत में नहीं थीं। लेकिन अन्त में छोटी की चुकती भावनाओं को रास्ता मिला। वह फूट-फूटकर रोने लगी। बड़ी को भी हिलकी बंध गई। इस प्रकार वे एक-दूसरी की बाहों में जकड़ी

रोती रहीं। अब वे मिस मैन की मृत्यु पर नहीं बिलख रही थीं, न अपने माता-पिता से दूरी पैदा हो जाने का उन्हें दुःख था, उनके मन पर इस बात का गहरा असर पड़ा था कि उस अज्ञात संसार में, जिसकी असलियत आज पहली बार उन्होंने देखी थी, उन पर क्या बीतेगी ! वे उस जिन्दगी से भयभीत हो रही थीं, जिसमें वे बड़ी हो रही थीं। वह जिन्दगी भी उन्हें आतंकित कर रही थीं, जो उनको तरह-तरह की डरावनी शक्लों वाला जंगल जान पड़ रही थी—वह जंगल, जिससे होकर उन्हें गुजरना था।

धीरे-धीरे चिन्ता की यह भावना धूमिल पड़ने लगी, उनकी सिसकियों का आवेग कम होने लगा, उनके बीच का अंतराल बढ़ गया। उनकी साँस अब आराम से आने लगी, शान्ति के साथ उनकी सांस की लय जुड़ गई। वे सो गईं।

## 'मण्डल' द्वारा प्रकाशित उपन्यास-साहित्य

मोगरा फूला
पद्मिनी का शाप
आँचल और आग
धूप-छांह
ज्वालामुखी
गौरप्रिया
टामकाका की कुटिया
मेघ-मल्हार
लहरों के बीच
अंधा मन
प्रकाश की छाया में
नियति के पुतले
प्रेम और प्रकाश
बदलाव
अन्तहीन अंत
अपराजिता
विराट